 ੴ सतिगुर प्रसादि ॥ 

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

मासिक

गुरमति ज्ञान

आषाढ़-सावन, संवत् नानकशाही ५४६
वर्ष ७ अंक ११ जुलाई 2014

संपादक : सिमरजीत सिंघ *एम. ए, एम. एस. सी.*
सहायक संपादक : जगजीत सिंघ *एम. ए, एम. एस. सी.*

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव, धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६
फोन: 0183-2553956-60
एक्सटेंशन नंबर
वितरण विभाग **303** संपादकीय विभाग **304**



फैक्स: 0183-2553919
e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com
website : www.sgpc.net

विषय-सूची

गुरबाणी विचार

अंतरु मलि निरमलु नही कीना बाहरि भेख उदासी ॥
हिरदै कमलु घटि ब्रहमु न चीन्हा काहे भइआ संनिआसी ॥१॥
भरमे भूली रे जै चंदा ॥ नही नही चीन्हिआ परमानंदा ॥१॥रहाउ॥
घरि घरि खाइआ पिंडु बधाइआ खिंथा मुंदा माइआ ॥
भूमि मसाण की भसम लगाई गुर बिनु ततु न पाइआ ॥२॥
काइ जपहु रे काइ तपहु रे काइ बिलोवहु पाणी ॥
लख चउरासीह जिन्हि उपाई सो सिमरहु निरबाणी ॥३॥
काइ कमंडलु कापड़ीआ रे अठसठि काइ फिराही ॥
बदति त्रिलोचनु सुनु रे प्राणी कण बिनु गाहु कि पाही ॥४॥ *(पन्ना ५२५)*

भक्त त्रिलोचन जी गूजरी राग में उच्चारण किए गए उपरोक्त शबद में फरमान कर रहे हैं कि किसी मनुष्य ने अपना मलिन मन साफ नहीं किया और बाहरी भेष उसने उदासियों (सन्यासी) वाला बनाया हुआ है। ऐसे में यदि वो अपने हृदय-घर में प्रभु-निवास को नहीं जान पाया तो उसके सन्यासी बनने का कोई लाभ नहीं। कहने से तात्पर्य, प्रभु निर्मल हृदय में निवास करता है और जब हृदय में प्रभु-निवास का ज्ञान हो जाता है तो जीव को परमात्मा को जानने के लिए किसी भी तरह का आडंबर आदि करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। भक्त त्रिलोचन जी का कहना है कि सारी दुनिया इसी भ्रम में है कि परमात्मा को पाने में वाह्याडंबरों का सहारा ज़रूरी है, जबकि यह गलत है। ऐसे में परमात्मा को पाना तो दूर उसके बारे में जानकारी रखना भी कठिन है। ऐसे हालात में जिस मनुष्य ने घर-घर जाकर, मांगकर खा-पी लिया, अपने शरीर का अच्छा-खासा पालन-पोषण कर लिया, गोदड़ी-मुंदराएं पहन लीं, शमशान की राख भी शरीर पर लगा ली, मगर जब तक उसने सच्चे गुरु के उपदेश को धारण नहीं किया, तब तक उसे परमात्मा की प्राप्ति नहीं हो सकती।

भक्त त्रिलोचन जी अगली पंक्तियों में (हठयोग का खंडन करते हुए) फरमान कर रहे हैं कि हे मनुष्य! क्यों गिनती-मिनती में पड़कर 'जप' कर रहे हो? क्यों (कठोर से कठोर) तप कर रहे हो? क्यों पानी को मथ रहे हो? कहने से तात्पर्य, हठ से किया गया जप-तप पानी मथने के समान है, जितना चाहे मथते जाओ, परिणाम शून्य ही होगा। उस वाशना-रहित प्रभु को याद करो, उसे हमेशा याद में समाए रखो, जिसने ये सब (चौरासी लाख) जीवों वाली सृष्टि की रचना की है। अंतिम पंक्तियों में भक्त त्रिलोचन जी का कहना है कि ऐ मनुष्य! फटे-पुराने कपड़ों वाली गोदड़ी पहनने से, हाथ में कमंडल पकड़ कर चलने से अठसठ तीर्थों का भ्रमण (मात्र दिखावे के लिए) करने का कोई लाभ नहीं। यदि फसल में दाना ही नहीं, गट्ठरों में दाने (बालियां) नहीं तो ऐसी फसल को गाहने का, मांड़ने का कोई लाभ नहीं। कहने से तात्पर्य, जैसे दानेदार फसल की ही कीमत आंकी जाती है इसी तरह वही जीव प्रभु-गुणों से सम्पन्न मूल्यवान होते हैं जो बाहरी दिखावे की जगह भीतर से ठोस, स्वच्छ एवं परिपक्व हों अर्थात् अध्यात्मिक रंग में रंगे हुए हों। 



धर्मी मनुष्य जीवन-मूल्यों की खातिर जान भी दे दिया करते हैं

सिक्ख धर्म का आगाज़ ही ज़ालिम के जुल्म का डटकर मुकाबला करने की प्रेरणा से हुआ। इसके लिए चाहे उन्हें जान भी क्यों न देनी पड़े। देश की दबी-कुचली जनता बादशाहों के जुल्म को सहारती हुई बद से बदतर ज़िंदगी व्यतीत कर रही थी। इन जुल्मों के विरोध में सिक्ख गुरु साहिबान और शूरवीरों ने अनेकों कुर्बानियां दीं। इनमें से एक हैं भाई तारू सिंघ जी जिन्होंने अपनी खोपरी उतरवाकर शहीदी प्राप्त की। इनके बारे में प्रसिद्ध बंगाली कवि श्री रवींद्र नाथ टैगोर की कलम भी अपने भावपूर्ण शब्द लिखने से नहीं रह पाई। टैगोर लिखते हैं कि जब भाई तारू सिंघ जी ने जुल्म के आगे घुटने टेकने से इन्कार करके सिक्खी को केशों-श्वासों के संग निभाने का प्रण दुहराया तो बादशाह ने भाई साहिब से कहा कि आप मुझे एक तोहफा दे दो। भाई साहिब बादशाह की दुष्टता को समझ गए कि बादशाह उनसे उनके गुरु की मोहर केश मांगकर एक तीर से कई शिकार करना चाहता है और उनकी सिक्खी पर प्रहार करना चाहता है। परंतु धन्य थे गुरू जी के सिक्ख भाई तारू सिंघ जी जिन्होंने बादशाह की मांग का उत्तर देते हुए कहा कि हे बादशाह! तुमने मेरे केशों की मांग की है, तो ले लो, परंतु इनको काटे बगैर खोपरी समेत ही उतार लो।

इसी क्रम में भाई तारू सिंघ जी को उनकी खोपरी उतारकर शहीद कर दिया, क्योंकि एक तरफ मानवता के पुरोधा सिक्ख शूरवीर थे तो दूसरी तरफ राज्य के ज़ालिम बादशाह थे। जकरिया ख़ान लाहौर का गवर्नर था, जिसने प्रण किया हुआ था कि वो मानवता के गुणों से ओत-प्रोत सिक्खों का नामों-निशान इस दुनिया से मिटा देगा। वो जितने सिक्खों को शहीद करता उससे कहीं ज्यादा उसके विरोध में आवाज़ उठाने को तैयार हो जाते। जकरिया ख़ान ने मुखबिरों के जरिए सिक्खों को दुनिया के नक्शे से मिटा देने का अभिमान चला रखा था। उसके इस पाप में हिस्सेदार थे हरिभगत निरंजनीए जैसे अनेकों मुखबिर। सिक्खों के विरुद्ध शिकायतें करने का मौका ये कायर एवं कपटी अपने हाथ से नहीं जाने देते थे।

भाई तारू सिंघ जी पूहला गांव (ज़िला श्री अमृतसर) के निवासी थे। भाई साहिब थोड़ी-सी ज़मीन पर किसानी करके अच्छा जीवन-निर्वाह किए जा रहे थे। जकरिया ख़ान के आतंक के कारण सिक्खों को एक जगह टिककर या घरों में बैठना नसीब नहीं था।

वे जंगलों आदि में दिन-रात बिताकर मुगलिया हकूमत की ज़ालिम नीतियों का डटकर विरोध करते तथा अपने साथियों को हकूमत से लोहा लेने की प्रेरणा देते। ऐसे सिक्खों की सेवा में भाई तारू सिंघ जी का परिवार सदैव तत्पर रहता। भाई जी ऐसे सिक्खों की लंगर से भरपूर सेवा करते क्योंकि भाई जी में धर्मी मनुष्य वाले सारे गुण विद्यमान थे जो उन्हें अन्य धर्मी एवं जुल्म विरोधी लोगों का समर्थन करने को उत्साहित करते थे।

मानव-गुणों से रहित तथा अवगुणों की खान बन चुके हरिभगत निरंजनीए को जैसे ही ख़बर हुई कि भाई तारू सिंघ जी गुरु के सिक्खों की लंगर आदि द्वारा मदद कर रहे हैं तो उसने झट से जा जकरिया ख़ान के कान भर दिए। जकरिया ख़ान भड़क उठा और उसने अपने दुष्ट होने की पहचान दर्शाते हुए भाई तारू सिंघ जी को गिरफ्तार कर लाने के लिए सिपाहियों को रवाना कर दिया। भाई जी को गिरफ्तार कर जकरिया ख़ान के सामने पेश किया गया।

जकरिया ख़ान की आंखों में क्रोध की ज्वाला भड़क रही थी जबकि भाई जी की आंखों में सब्र, संतोष, धैर्य, शांति की रोशनी जगमगा रही थी। अन्य मुगल तानाशाहों की भांति जकरिया ख़ान के पास भी एक ही रास्ता था कि हकूमत की नीतियों के विरोध में चलने वालों को जलील करने एवं अन्य को आगाह करने के लिए पकड़े गए सिक्ख का ईमान खरीद लिया जाए या उसका धर्म-परिवर्तन करवा दिया जाए। भाई जी ने जकरिया ख़ान के सारे लालच ठुकरा दिए। जकरिया ख़ान ने अपना असली अत्याचारी मनुष्य का रूप दिखाते हुए हुक्म दिया कि भाई जी के केश कत्ल (काट) कर दिए जाएं। भाई जी में इंसानियत एवं सिक्खी-प्रेम उफ़ान पर था। उन्होंने कहा कि मैं किसी भी हाल में अपने केशों को कत्ल नहीं करने दूंगा। जकरिया ख़ान ने वहशियाना हंसी हंसते हुए कहा, तो फिर इनकी खोपरी ही उतार दी जाए। धैर्यवान भाई तारू सिंघ जी मन ही मन प्रभु-नाम में लीन, साहस में बंधे भगवान के सच्चे मनुष्य की मूरत बनकर बैठे रहे। जल्लाद ने बड़ी निर्दयता से भाई जी की खोपरी उतार दी। मानवता कांप उठी। हर तरफ आतंक का सन्नाटा छा गया। यातनाएं सहते हुए भाई जी शहीद हो गए।

भाई तारू सिंघ जी ने अपने जीवन में बड़े धैर्य से शुभ कर्मों का संग्रह किया तथा अंत समय में हकूमती जब्र की ज्यादतियों को सहन करके यह बता दिया कि दुनिया में ज्यादतियां करने वाले ज़ालिमों को इतिहास हमेशा दुत्कारता रहेगा, जबकि धर्म और सच के पक्ष में डटकर, लड़कर वीरगति को पाने वाले रहती दुनिया तक सत्कार के पात्र बने रहेंगे। 

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब : जीवन परिचय

*-डॉ. परमजीत कौर**

संत-सिपाही, दुष्ट-दमनकर्त्ता, परोपकारी, अद्भुत योद्धा, प्रेम की मूर्ति, विनम्रता के पुंज, दीन-दुनी के पातशाह, अद्वितीय व्यक्तित्व के स्वामी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म श्री गुरु अरजन देव जी तथा माता गंगा जी के गृह में २१ आषाढ़, संवत् १६५२ तद्नुसार १९ जून, सन् १५९५ को ज़िला श्री अमृतसर के गांव वडाली में हुआ।

ब्रह्मज्ञानी बाबा बुड्ढा जी का आशीर्वाद प्राप्त श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के अनुपम सौंदर्य की कांति से प्रदीप्त मुख-मंडल को देखकर दाई आनंद-विभोर होकर सोचने लगी कि उसके हाथों ने अनेक बालकों का स्पर्श किया है परंतु ऐसा तेज, ऐसी कांति कभी नहीं देखी। महाकवि भाई संतोख सिंघ के शब्दों में :

बाल अनेक भए मम हाथ, नहीं इस के सम को दुति पावति।
सुंदर सूरति शोभ ते पूरति स्री मुख मंद मनो मुशकावति।

(श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, रास ३:४)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के बचपन का बहुत-सा समय गुरु-पिता श्री गुरु अरजन देव जी के साथ बीता। प्रिथी चंद द्वारा तीन बार (बाल) श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब पर घातक वार करवाये गये। एक बार श्री अमृतसर से दाई को भेजा गया जो अपने स्तनों पर विष लगाकर आयी। दूसरी बार सपेरे द्वारा सांप को आपके कक्ष में छुड़वाकर मारने का प्रयत्न किया गया किंतु दोनों ही वार व्यर्थ गये। दो वर्ष की आयु में आप जब पिता-गुरु श्री गुरु अरजन देव जी के साथ श्री अमृतसर आए तब तीसरी बार दही में ज़हर मिलाकर खिलाने का प्रयास किया गया किंतु आपने दही नहीं खाया, उच्च स्वर में रोने लगे। श्री गुरु अरजन देव जी समय पर पहुंच गए। दही खिलाने वाले ब्राह्मण ने सारा भेद खोल दिया। श्री गुरु अरजन देव जी ने परमात्मा का धन्यवाद किया। इसका वर्णन श्री गुरु ग्रंथ साहिब में भी वर्णित है। गुरु साहिब का कथन है कि परमात्मा की कृपा अपने सेवक पर हुई है। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब पर उस दुष्ट की करतूत का बिल्कुल भी दुष्प्रभाव नहीं पड़ा। गुरु के प्रताप से वह ब्राह्मण पेट में शूल उठने से मर गया :

लेपु न लागो तिल का मूलि ॥
दुसटु ब्राहमणु मूआ होइ कै सूल ॥१॥
हरि जन राखे पारब्रहमि आपि ॥
पापी मूआ गुर परतापि ॥ (पन्ना ११३७)

लाहौर में अकाल पड़ने तथा शीतला का प्रकोप होने पर श्री गुरु अरजन देव जी सपरिवार लाहौर गये तथा पीड़ितों की सहायता, सेवा करते रहे। आठ महीने तक वहाँ रहने के बाद जब श्री अमृतसर वापिस आए तो (बाल) श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को तेज बुखार चढ़ा तथा चेचक (माता) निकल आयी थी। श्री गुरु अरजन देव जी ने अकाल पुरख का आश्रय लिया तथा सुपुत्र के स्वस्थ होने पर परमात्मा

६२०, गली नं. २, छोटी लाइन, संतपुरा, यमुनानगर-१३५००१ (हरियाणा); फोन ०१७३२-२२४९८८

का धन्यवाद किया :

सदा सदा हरि जापे ॥
प्रभ बालक राखे आपे ॥
सीतला ठाकि रहाई ॥
बिघन गए हरि नाई ॥ *(पन्ना ६२७)*

श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की शिक्षा का उत्तरदायित्व बाबा बुड्ढा जी को सौंप दिया। बाबा जी ने गुरबाणी की शिक्षा के साथ-साथ अस्त्र-शस्त्र-विद्या, घुड़सवारी, तीर, तेग, नेजाबाज़ी आदि शूरवीरों के सारे करतबों में पारंगत कर दिया। सन् १६०६ में जब जहांगीर ने श्री गुरु अरजन देव जी को बंदी बनाकर लाहौर ले आने का आदेश जारी किया तब श्री गुरु अरजन देव जी ने बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरदास जी को बुलाकर उन्हें सारे हालात समझाकर श्री अमृतसर में संगत के सामने भरे दीवान में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को गुरता का उत्तरदायित्व सौंप दिया। उस समय आपकी आयु ११ वर्ष की थी।

गुरगद्दी पर विराजमान होते समय श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने दो कृपाणें धारण कीं-- एक मीरी अर्थात् शक्ति तथा सामर्थ्य की प्रतीक तथा दूसरी पीरी अर्थात् धर्म-साधना की प्रतीक। भाई गुरदास जी गुरु जी के अनूठे व्यक्तित्व का वर्णन करते हुए कहते हैं कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब मीरी-पीरी वाले भारी गुरु तख़्त पर बैठे हैं। मानों श्री गुरु अरजन देव जी ने ही काया बदलकर हरिगोबिंद रूप मूरत सवारी है। दलों का नाश करने वाला बड़ा शूरवीर परोपकारी गुरु प्रकट हुआ है :

पंजि पिआले पंजि पीर छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी।
चली पीड़ी सोढीआ रूपु दिखावणि वारो वारी।
दलि भंजन गुरु सूरमा वड जोधा परउपकारी ॥
(वार १:४८)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अनुभव किया कि मानवता को कुचले तथा दबाये जाने से रोकने के लिए मानव-हृदय में ऐसा जज़्बा पैदा होना ज़रूरी है जिसके एहसास से न कोई किसी से डरे तथा न किसी को डराये। हथियार उठाने के लिए मन की जागृति ज़रूरी है। स्वाभिमान तथा आत्मविश्वास की भावना पैदा होने के बाद ही अपनी रक्षा तथा दूसरों को जुल्म से बचाने के लिए हथियार ग्रहण किए जा सकते हैं। गुरु साहिब ने समझाया कि धर्म की रक्षा के लिए वीर रस ज़रूरी है। उत्साही जीवन जीने वाला ही सत्य के लिए प्राण दे सकता है, कायर नहीं। गुरु साहिब के समय ढाडी वीर रस पैदा करने के लिए वारें गाया करते थे :

सुनि अबदुल ढाढी चलि आयो।
भए सुभट तिन को जसु गायो।
जिस के सुनति बीर रस जागे।
काइर सो पि लरे नहिं भागे ॥३०॥
(श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, रास ४ अंसू ४४)

श्री गुरु अरजन देव जी ने दसवंध की राशि एकत्र करने के लिए मसंदों को जिम्मेदारी दी थी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मसंदों तथा दूर देशों से आने वाले व्यापारियों को भेंट में अस्त्र-शस्त्र तथा घोड़े लाने के लिए प्रेरित किया। सिक्खों को शस्त्र-विद्या सिखाने के लिए ५२ शूरवीर नियुक्त किए। परिणामस्वरूप माझा, मालवा आदि क्षेत्रों से ५०० नौजवान गुरु जी के पास आ गए तथा वे शस्त्र-विद्या में निपुण होने लगे। शिकार खेलने का कार्यक्रम भी प्रारंभ हो गया। गुरु साहिब के नेतृत्व में सिक्ख आस-

पास के जंगलों में शिकार खेलने के लिए जाने लगे। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री हरिमंदर साहिब के सामने श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण करवाया। श्री अकाल तख़्त साहिब के सामने खुले मैदान में ढाडी वारें गाया करते थे।

सन् १६१२-१३ में गुरु साहिब सिक्ख धर्म के प्रचार के लिए दुआबा, मालवा क्षेत्र की तरफ गए। वहां से करतारपुर पहुंचे। करतारपुर के समीप पठानों के गांव वडे मीर के बहुत सारे नौजवान गुरु जी के पास भर्ती हो गए। उन में से एक पैंदे खां भी था जो गुरु जी का विशेष कृपा-पात्र बना। १६१५ ई में गुरु साहिब श्री अमृतसर वापिस आए। १६१६ ई में गिलटी ताप ने ज़ोर पकड़ लिया। पंजाब, सरहिंद, दिल्ली, आगरा में बहुत तबाही हुई। कश्मीर में १६१६ ई से १६२४ ई तक आठ वर्ष तक इसका प्रकोप रहा। गुरु जी १६१६ ई में कश्मीर गए तथा दसवंध की राशि से आर्थिक सहायता करनी प्रारंभ कर दी। परिणामस्वरूप अनेक सिक्ख बने। सिक्ख इतिहास में मुसलमान से सिक्ख बने भाई कट्टू का नाम आदर सहित वर्णित है। जाते समय गुरु जी ने सियालकोट के नज़दीक गांव 'चपरनाला' की जलहीन धरती पर 'गुरूसर' नामक सरोवर तैयार करवाया था। श्रीनगर से वापिस आते समय आप बारामुल्ला के रास्ते गुजरात, वजीराबाद, हाफिजाबाद होते हुए ननकाणा साहिब आए। गिलटी ताप का प्रकोप लाहौर में भी तबाही मचाने लगा। गुरु जी ननकाणा साहिब से लाहौर पहुंचे तथा १६१८ ई में श्री अमृतसर वापिस आ गए। श्री अमृतसर में गुरु-दर्शन के लिए आने वाली संगत की संख्या बढ़ती हुई देखकर सन् १६२८ में 'बिबेकसर' नामक सरोवर तैयार करवाया।

गिलटी ताप के प्रकोप के समय जहांगीर भी कश्मीर गया था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की बढ़ती लोकप्रियता ने उसे चिंतित कर दिया। आगरा पहुंचकर जहांगीर ने (गुप्त) आदेश जारी कर दिया कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को लाकर ग्वालियर के किले में नज़रबंद कर दिया जाए। ग्वालियर के किले में नज़रबंद होने पर गुरु जी ने मुगल सलतनत की रसोई में तैयार भोजन तीन दिन तक नहीं किया क्योंकि मेहनत की कमाई से जीवन व्यतीत करना सिक्ख धर्म का एक बुनियादी नियम है। ग्वालियर के किले में प्राप्त भोजन जुल्म से एकत्र की गयी सम्पदा का ही अंश था। अंत में गुरु जी ने गुरसिक्खों द्वारा मेहनत करके लाए गए धन से तैयार किए गए भोजन को ही स्वीकार किया। भाई संतोख सिंघ लिखते हैं :

श्री मुख ते फुरमावनि कीनि।
इह भोजन खाहिं कबी न।
बहिर जाइ मिहनत करि ल्यावहु।
रसद खरीदहु बिपनी जावहु।
तिस ते तयार अहार करीजहि।
हित भोजन दे सो हम दीजहि।
नांहि त रहि हैं पौन अहारी।
जबि लगि बासहिं दुरग मझारी।

(श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ)

तथा :

स्री मुखि कहा किरति करि लयावो।
सो भोजनु हम कौ करवावो ॥४८५॥

(श्री गुर बिलास पाः छेवीं, पृष्ठ २५१)

ग्वालियर के किले में बंद निराश राजाओं को गुरु जी उत्साहित करते तथा हौसला बनाए रखने के लिए प्रेरित करते। गुरु जी के रहन-सहन तथा कथनी-करनी का उन पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि उन्होंने भी संगत में जुड़ना शुरू

कर दिया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब सदा चढ़दी कला में तथा उत्साहित रहते। जब दूसरे राजाओं ने पूछा कि आप नज़रबंद होकर भी इतना खुश कैसे रहते हो तो गुरु जी का उत्तर था कि राजा मेरे शरीर को बंदी बना सकता है, मन को नहीं। मेरा मन आज़ाद है। मेरा मन सदैव प्रभु से जुड़ा रहता है। ग्वालियर के किले में बंद राजाओं की पीड़ा को गुरु जी ने पूरी तरह से अनुभव किया। जब जहांगीर ने गुरु साहिब की रिहाई का हुक्म जारी किया तो आप ने वज़ीर खां द्वारा जहांगीर को कहलवा भेजा कि राजाओं की रिहाई के बिना वे किले से बाहर नहीं जायेंगे। भाई संतोख सिंघ के शब्दों में :

श्री हरिगोविंद सुनति बखाना।
अटक परी इक कठन महाना।
जबि हम प्रविशे दुरग मझारी।
भयो कैदीअनि को सुख भारी।
खान पान ते भए सुखारे।
छुटनि भरोसा मन महिं धारे।
अबि सुनि लीनो शाहु हकारे।
परे शरनि बहु बिनै ऊचारें।
रावरि बिना न हम गति काई।
कै मारहु कै देहु जिवाई ॥१२॥
हमरे सदा प्रतग्गया इही।
शरनि परे कहु तयागति नहीं।
(श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, रास ४, अंसू ६५)

गुरु जी का यह कथन कोई दिखावा नहीं था, इसलिए जहांगीर के यह करने पर कि जो गुरु जी का दामन पकड़कर बाहर आ सकते हैं, रिहा कर दिये जायेंगे, गुरु जी ने ५२ कलियों वाला चोला सिलवाया, जिसकी एक-एक कली पकड़कर सारे राजा बाहर आ गए। गुरु जी को उस समय से 'बंदी छोड़ दाता' के नाम से भी याद किया जाता है।

ग्वालियर के किले से आज़ाद होने के बाद जब गुरु साहिब श्री अमृतसर जाने के लिए रवाना हुए तो जहांगीर भी कश्मीर जाने के लिए तैयार था। दोनों ने यह यात्रा एक साथ की। दोनों के विश्राम-कैंप अलग-अलग होते थे। सिक्ख इतिहास में इस यात्रा के दौरान घटित एक रोचक घटना-वृत्तांत वर्णित है :-

एक निर्धन घसियारा गुरु जी से मिलने गया परंतु गलती से जहांगीर के कैंप में चला गया। उसने मेहनत की कमाई का एक टका भेंट करके संसार-समुद्र से पार लगाने की प्रार्थना की। जहांगीर समझ गया कि वह गलती से उसके पास आ गया है। उसने कहा कि वह तो धन-सम्पदा दे सकता है। इस प्रकार की कृपा करने वाले तो (गुरु जी) दूसरे कैंप में हैं। घसियारे ने निडरतापूर्वक अपना टका उठाया तथा गुरु साहिब के दर्शन हेतु चला गया।

१६२१ ई. के अंत में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब श्री अमृतसर वापिस आ गये। १६२७ ई में जहांगीर की मृत्यु के बाद उसका पुत्र शाहजहां राजा बना। गुरु साहिब के सिक्ख शस्त्रधारी बन रहे थे। शाहजहां को यह पसंद नहीं आया। उसने चार बार गुरु साहिब पर आक्रमण करवाया। पहली बार १६२८ ई में गुरु साहिब की पुत्री बीबी वीरो के विवाह के अवसर पर। सिक्ख जब शिकार खेलते समय गांव कुहाला गए तथा वहां लाहौर के सूबेदार से मुलाकात हो गयी। लाहौर का सूबेदार सिक्खों का शिकार खेलना सहन न कर सका। एक बाज़ को लेकर मुगल सिपाहियों तथा सिक्खों में तकरार हो गयी। लाहौर जाते ही सूबेदार ने मुखलिख खां को फौज देकर श्री अमृतसर पर आक्रमण करवा दिया। बीबी वीरो का विवाह श्री अमृतसर के बजाए गांव झबाल में हुआ।

लड़ाई में मुखलिस खां मारा गया, मुगल भाग गए। इस युद्ध में गुरु जी ने लकड़ी की तोप का प्रयोग किया।

१६२९ ई के अंत में गुरु जी श्री अमृतसर से करतारपुर आ गए। प्रचार करते हुए श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा बसाये हुए नगर श्री हरिगोबिंदपुर में आए, जो चंदू की शरारत से रुहेले गांव के निवासी भगवान दास को मिल गया था। भगवान दास सिक्खों को तंग करने लगा था तथा सिक्खों के हाथों मारा गया था। भगवान दास के पुत्र रत्न चंद ने जलंधर के फौजदार से १६३० ई में गुरु साहिब पर आक्रमण करवा दिया। इसमें जलंधर का फौजदार मारा गया।

मुगलों ने तीसरा आक्रमण १६३१ ई में किया। काबुल के एक व्यापारी द्वारा गुरु जी के लिए भेंटस्वरूप लाए गए घोड़ों को मुगल सिपाहियों द्वारा जबरदस्ती छीन लेने पर भाई बिधीचंद ने उन घोड़ों को आज़ाद करवाकर गुरु साहिब के पास डरोली में पहुंचा दिया। लाहौर के सूबेदार ने लला बेग तथा कमर बेग के नेतृत्व में सेना भेजी। महिराजें नामक स्थान पर हुए इस युद्ध में १२०० के लगभग दोनों सेनाओं के सैनिक मारे गए। दोनों मुगल सरदार भी मारे गए। विजय गुरु जी की हुई। गुरु साहिब ने युद्ध-स्थल पर 'गुरूसर' नामक सरोवर बनवाया। चौथी लड़ाई पैंदे खां की बेवफाई के कारण १६३४ ई में करतारपुर में हुयी।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने युद्ध किए, उनमें विजय प्राप्त की, पर आज़ादी तथा अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए न कि राज्य-प्राप्ति के लिए। गुरु साहिब ने समझाया कि जंग-शक्ति जन-शक्ति को मज़बूत करने के लिए होनी चाहिए न कि जन-शक्ति को कमज़ोर करने के लिए तथा बेगुनाहों पर जुल्म करने के लिए। भाई साहिब भाई वीर सिंघ के शब्दों में :-

"इस दाना हकीम की कमर के साथ लटकती हुयी तलवार यह नहीं बताती कि हम जुल्म कर रहे हैं पर यह बताती है कि हम जुल्म की तलवार के आगे बेबस हो गए दुखी लोगों के चारों तरफ वीरता की बाड़ बना सकते हैं।" *(जीवन प्रसंग श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब, पृष्ठ ५७)*

गुरु साहिब का जीवन यह समझाता है कि जुल्म का मुकाबला तथा आत्मिक नेतृत्व दोनों कार्य साथ-साथ किए जा सकते हैं। एक बार गुजरात के प्रसिद्ध फकीर शाह दौला ने गुरु जी के शाही रहन-सहन को देखकर पूछा कि "हिंदू क्या और पीरी क्या? औरत क्या और फकीरी क्या? दौलत क्या और त्याग क्या? पुत्र क्या और वैराग क्या? गुरु जी ने उत्तर दिया -- "औरत ईमान है! पुत्र निशान है! दौलत गुजरान है! पीर, न हिंदू न मुसलमान है!"

गुरु जी के लिए अमीर-गरीब सब बराबर थे। जहांगीर को वही लंगर छकाना जो संगत छकती थी; गरीब माई भागभरी के हाथों से प्यार तथा श्रद्धा से बनाया गया खद्दर का कुर्ता स्वीकार करना, डरोली के एक गांव में रहने वाले गरीब सिक्ख भाई साधू तथा उसके पुत्र भाई रूपा के पास ठंडा पानी पीने के लिए कड़कती धूप में पहुंचना, भाई कट्टू शाह की मांग पर शहद न देने पर शहद को स्वीकार न करना आदि दृष्टांत गुरु साहिब के संगत के साथ प्रेम के परिचायक हैं। 'गरीब का मुंह गुरु की गोलक'-- गुरु जी के इस कथन को समझने तथा दृढ़ करने की ज़रूरत है। भाई गड़ीए द्वारा कश्मीर की संगत द्वारा भेंट की गयी सारी

(शेष पृष्ठ २१ पर)

मीरी-पीरी के मालिक श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब

-डॉ. नवरत्न कपूर*

पांचवें सिक्ख गुरु श्री गुरु अरजन देव की धर्म-पत्नी माता गंगा जी की कोख से श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का जन्म ज़िला श्री अमृतसर के वडाली नामक गांव में हुआ था। इसी उपलक्ष्य में श्री गुरु अरजन देव जी ने लोगों की पानी की कमी संबंधी परेशानी दूर करने के लिए छेहरटा और वडाली की धरती पर तीन रहंटों वाले कुएं खुदवाए।[१] छेहरटा वाला कुआं संवत् १६५४ में बनवाया गया, जिस पर छ: रहंट चल सकते थे। इस कुएं से आस-पास वाली ज़मीन की सिंचाई की जाती थी। इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने सुपुत्र के जन्म के उपलक्ष्य में ब्यास नदी के तट पर एक नगर बसाया, जिसका नाम श्री हरिगोबिंदपुर विख्यात है।

शिक्षा-दीक्षा : जैसे ही गुरु जी पांच वर्ष के हुए तो श्री गुरु अरजन देव जी ने उन्हें सर्वगुण-संपन्न बनाने का निश्चय कर लिया। भाई गुरदास जी और भाई परागा जी की देख-रेख में उन्हें धार्मिक तथा सामाजिक शिक्षा प्रदान की जाने लगी। शस्त्र-संचालन का प्रशिक्षण बाबा बुड्ढा जी और भाई जेठा जी देने लगे। संगीत-शिक्षा का कार्य भाई मुकंदा जी ने संभाला।

गुरु-पदवी की प्राप्ति : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब अभी लगभग दस वर्ष की अवस्था के ही थे कि मुगल साम्राज्य के दिल्ली दरबार के चंदू नामक एक सामंत ने एक ब्राह्मण को अपनी बेटी के लिए वर खोजने का कार्य सौंपा तो उसने श्री गुरु अरजन देव जी की महिमा से प्रभावित होकर शगुन की राशि आपको भेंट कर दी। लौटकर ब्राह्मण ने चंदू को बताया तो वह सुनते ही आग-बबूला हो उठा और घृणापूर्वक बोला-- "भैड़िआ! तैं तां चुबारे दी इट्ट मोरी नूं ला दित्ती ए।" (मूर्ख! तूने तो चौबारे की ईंट गंदी नाली में लगा दी है अर्थात् मैं शाही ख़ानदान का कर्मचारी हूं और तुमने इस कार्य द्वारा मेरी प्रतिष्ठा को गहरी ठेस पहुंचाई है।) जब कानों-कान यह ख़बर गुरु साहिब तक उनके श्रद्धालुओं द्वारा पहुंची तो उन्होंने शगुन के रूप में अपने सुपुत्र को भेंट की गई राशि अपने विश्वसनीय श्रद्धालु द्वारा चंदू को वापस लौटा दी। इससे चंदू और भड़क गया। उसने शेख अहमद सरहंदी और गुरगद्दी की होड़ में पिछड़े हुए श्री गुरु अरजन देव जी के बड़े भाई प्रिथी चंद को अपने साथ मिलाकर गुरु साहिब के विरुद्ध मुगल सम्राट के पास शिकायत की। इसी दौरान तत्कालीन मुगल सम्राट जहांगीर को अपने छोटे बेटे खुसरो के श्री गुरु अरजन देव के प्रति झुकाव का पता चला और बगावत के दौरान उसके तरनतारन में कुछ समय टिकने की ख़बर सुनकर उसने गुरु साहिब को गिरफ्तार करवा कर लाहौर बुला लिया। साईं मीयां मीर जी ने गुरु साहिब के निर्दोष होने की वकालत भी की, किंतु जहांगीर ने उनकी पैरवी को अनसुनी करके गुरु साहिब को शहीद करने का आदेश जारी कर दिया।

*१६९७, जीवन संत कॉटेज, देवान मूल चंद स्ट्रीट, नजदीक आर्य समाज, पटियाला-१४७००१ (पंजाब)

बाबा बुड्ढा जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को २८ ज्येष्ठ, संवत् १६६३ तद्नुसार २५ मई, १६०६ ई को गुरगद्दी पर बिठाया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब दसतार पर कलगी सजाकर गुरगद्दी पर विराजमान हुए। उन्होंने दो कृपाणें धारण कीं। उनमें से एक आध्यात्मिकता की प्रतीक थी, जिसे अरबी भाषा में 'पीरी' कहा जाता है और दूसरी सांसारिकता की प्रतीक थी, जिसे अरबी भाषा में 'मीरी' कहा जाता है :

दो तलवारी बद्धीआं
इक मीरी दी इक पीरी दी।
इक अज़मत दी इक राज दी,
इक राखी करे वज़ीर दी।
हिम्मत बाहां कोट गढ़,
दरवाज़ा बलख बखीर जी।
कोट सिपाही नील नल,
मार दुषटां करे तागीर जी।
पग्ग तेरी, की जहांगीर दी?

इस प्रकार शाही ठाठ-बाठ से संपन्न और गुरमति मर्मज्ञ श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ग्यारह वर्ष की अवस्था में मीरी-पीरी के मालिक की उपमा से विभूषित हो गए।

गुरगद्दी संभालते ही उन्होंने अपने सभी श्रद्धालुओं को हुकमनामे भेजे कि नौजवान सिक्ख सैनिक वेष में आएं। उन्हें शस्त्र मुहैया करवाए जाएंगे। इसके फलस्वरूप सैंकड़ों युवक उनकी शरण में आने लगे, जिन्हें सैनिक प्रशिक्षण देने के लिए उन्होंने ५२ शूरवीरों को उत्तरदायित्व सौंपा।

निर्माण-कार्य : मुगल बादशाहों को अपने बड़े-बड़े महल और विशाल किले बनाने का अभिमान था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने उसी मुकाबले में श्री अमृतसर में श्री हरिमंदर साहिब के सामने एक ऊंचा तख़्त (राज-सिंहासन) तैयार करवाया, जिसे 'अकाल बुंगा' नाम प्रदान किया। यही पावन स्थल श्री अकाल तख़्त साहिब कहलाने लगा। यहीं पर गुरु साहिब सुबह और शाम दीवान सजाकर गुरमति सहित वीरता के उपदेश देते थे। यहां झूलते दो निशान साहिब मीरी-पीरी की उपमा को दृढ़ करवाते हैं।

गुरु जी ने लाहौर की ओर से आने वाले आक्रमणकारियों को रोकने के लिए लोहगढ़ किले का निर्माण करवाया। आज यहां सुंदर गुरुद्वारा साहिब सुशोभित है। सन् १६२६ में उन्होंने कीरतपुर नामक नगर और सन् १६२७ में महिराज नामक नगर बसाया था। विवेकी सिक्खों के विश्राम के लिए श्री अमृतसर नगर के बाहर सन् १६२८ में बिबेकसर नामक ताल बनवाया था।[२]

बंदी छोड़ दाता : लाहौर के सूबेदार मुर्तज़ा खां को जब पता चला कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब शाही ठाठ-बाठ से रहते हैं; लोग उन्हें 'सच्चा पातशाह' कहते हैं; श्री अमृतसर में उन्होंने श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण करवाया है तो उसने (गुरु साहिब के विरोधियों के भड़काने पर) इस बात की शिकायत मुगल बादशाह जहांगीर से कर दी। बादशाह ने अपने दो कर्मचारियों-- वज़ीर खां और गुंचा बेग द्वारा गुरु जी को (स्पष्टीकरण देने के लिए) आगरा बुलाया। निर्भीक गुरु साहिब भाई जेठा जी और भाई पिराणा जी के साथ आगरा के समीप यमुना नदी के तट पर बने 'मजनू टिल्ला' नामक स्थान पर जा टिके। यह समाचार सुनते ही गुरमति-प्रेमी-श्रद्धालु धड़ाधड़ वहां पहुंचने लगे। बादशाह भी स्वयं वहां पहुंच गया और गुरु साहिब का व्यक्तित्व देखकर आश्चर्यचकित हो गया। बादशाह ने उन्हें ग्वालियर के किले में कैद कर दिया।

गुरु-घर के विरोधी रहे चंदू ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को खत्म करवाने के लिए अनेक हथकंडे अपनाए। उसने किले के दारोगा हरिदास को पत्र लिखा कि वह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को विषैला भोजन खिलाकर मरवा डाले अथवा ज़हरीले वस्त्र पहनाकर। किले का दारोगा धार्मिक विचारों का था। उसने गुरु साहिब को सदा सचेत रहने के लिए प्रार्थना की। जब गुरु साहिब की गिरफ्तारी की सूचना पंजाब में पहुंची तो सिक्ख जत्थे ग्वालियर पहुंचने लगे। गुरु जी के दर्शन करने में असमर्थ रहने के कारण वे किले के बाहर बैठकर कुछ समय गुरबाणी का कीर्तन करने के पश्चात वापिस लौट जाते थे।

लगभग ढाई महीने बाद जहांगीर का विवाह नूरजहां के साथ हुआ। नूरजहां साईं मीयां मीर जी को अपना 'पीर' मानती थी। उसे प्रेरित करके साईं मीयां मीर जी ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को कैद से मुक्त किए जाने का आदेश जारी करवा लिया। उधर गुरु साहिब को बंदीखाने में यह ज्ञात हो गया था कि बादशाह जहांगीर ने उनकी तरह ५२ अन्य निर्दोष राजाओं को भी ग्वालियर के किले में कैद कर रखा है। उन्होंने आदेश सुनते ही साईं मीयां मीर जी के द्वारा बादशाह तक यह संदेश भिजवाया कि उन निर्दोष लोगों को भी बंधन-मुक्त किया जाए। बादशाह जहांगीर ने इसे स्वीकार कर लिया। गुरु साहिब के कहने पर उनके पहनने के लिए ५२ कलियों वाला एक चोगा बनवाया गया, जिसकी एक-एक सफ़ेद कली राजाओं के दोषरहित स्वच्छ मन की प्रतीक थी। प्रत्येक राजा एक-एक कली को हाथ में थामे हुए कैदखाने से बाहर आ गया। वे लोग गुरु साहिब के आजीवन ऋणी रहे और गुरु साहिब इस परोपकार के फलस्वरूप 'बंदी छोड़ दाता' के नाम से प्रख्यात हो गए।

गुरु साहिब कार्तिक मास की अमावस्या को श्री अमृतसर पधारे। संयोगवश उस दिन 'दीपावली' का पर्व था। इसी कारण सिक्ख इतिहास में 'दीपावली' के उत्सव को 'बंदी छोड़ दिवस' के नाम से पुकारा जाता है और सभी सिक्ख गुरुद्वारों में रोशनी की व्यवस्था कर 'बंदी छोड़ दिवस' मनाया जाता है।

गुरु साहिब के युद्ध : मुगल बादशाह जहांगीर का देहांत ८ नवंबर, सन् १६२७ ई को हो गया। उसके पुत्र शाहजहां ने सिंहासनारूढ़ होते ही यह घोषणा कर दी कि मुसलमानों के अतिरिक्त किसी भी अन्य धर्म के लोग न तो अपने धर्म का प्रचार करें और न ही किसी धार्मिक स्थल का निर्माण करें। जो भी इस आदेश का उल्लंघन करेगा उसे मौत के घाट उतार दिया जाएगा। इससे लाहौर के नवाबों के हौसले बुलंद हो गए और वे कोई न कोई बहाना बनाकर सिक्खों को परेशान करने लगे। सिक्ख श्रद्धालु गुरु साहिब के पास आकर अपने कष्टों की गाथाएं सुनाते।

पहला युद्ध : इसका मुख्य कारण था कि बादशाह शाहजहां का शाही बाज़ (पक्षी) उड़कर श्री अमृतसर में आ गया और सिक्खों ने उसे पकड़ लिया। जब मुगल कर्मचारी उसे ढूंढते हुए पहुंचे और गुरु साहिब के सिक्खों से बाज़ लौटाने के लिए कहा तो उन्होंने निर्भीक होकर उत्तर दिया-- "यह बाज़ हम लोगों ने पकड़ा है। अब यह हमारा है।" मुगल कर्मचारियों ने यह बात बादशाह शाहजहां को बताई तो उसने मुखलिस खां के नेतृत्व में सैनिकों की टुकड़ियां भेजी, जिन्हें गुरु साहिब के सैनिकों ने पिपली साहिब (निकट खालसा कॉलेज, श्री अमृतसर)

के समीप (सन् १६२८ में) रोक लिया। इस भयानक युद्ध में मुखलिस खां मारा गया और विजय गुरु जी की हुई।

दूसरा युद्ध : यह युद्ध सन् १६३० में ब्यास नदी के तट पर स्थित श्री हरिगोबिंदपुर नगर में लड़ा गया। इस युद्ध में जलंधर का अब्दुल्ला नामक नवाब १५ हज़ार सैनिक लेकर आया था। उसे गुरु साहिब के विरोधी भगवान दास के पुत्र रत्न चंद के अतिरिक्त चंदू के बेटे कर्मचंद ने भरपूर सहयोग दिया था। अब्दुल्ला के पुत्र नबी बख़्श तथा करीम बख़्श ने युद्ध का संचालन किया। गुरु साहिब के सैनिकों ने मुगल सेना को मार गिराया।

तीसरा युद्ध : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का एक शिष्य उन्हें भेंट करने के लिए काबुल से दो सुंदर घोड़े ला रहा था। इनमें से एक का नाम था 'दिलबाग' और दूसरे का 'गुलबाग'। एक मुगल अधिकारी ने रास्ते में छीनकर शाही अस्तबल में भेज दिए। गुरु साहिब के एक साहसी सिक्ख भाई बिधीचंद ने पहली बार घसियारा बनकर एक घोड़ा कब्ज़े में कर लिया और दूसरा घोड़ा उसने ज्योतिषी बनकर हथिया लिया। यह रहस्य प्रकट होने पर मुस्लिम नवाब ने लला बेग और कमर बेग के नेतृत्व में मुगल सैनिकों को भेजा। यह सूचना मिलते ही गुरु साहिब के सिक्ख सैनिकों ने उन्हें गुरूसर महिराज और नथाणा के बीच १६ दिसंबर, सन् १६३१ को रोक लिया। लला बेग और कमर बेग बच न पाए और अपनी भारी सेना के साथ जान खो बैठे।

चौथा युद्ध : सन् १६३४ में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब अपने परिवार सहित करतारपुर (ज़िला जलंधर) में विराजमान थे। उन्होंने पैंदे खां नामक एक पठान को शस्त्रास्त्र की शिक्षा दी थी। उन्होंने उसे अपना सेनानायक बना दिया था। कुछ ही दिनों बाद पैंदे खां अपने दामाद आसमान खां के बहकावे में आकर नमकहरामी कर बैठा। उसने मुगलों की सेना का नेतृत्व करते हुए गुरु साहिब के सैनिक क्षेत्र पर हमला बोल दिया। सिक्ख सेना की दूसरी टुकड़ी को काले खां नामक मुगल सेनापति ने घेर लिया। सिक्ख सेना का नेतृत्व गुरु साहिब के ज्येष्ठ पुत्र बाबा गुरदित्ता जी और गुरु साहिब के एक श्रद्धालु भाई बिधीचंद ने किया। इस युद्ध में गुरु साहिब के सबसे छोटे सुपुत्र श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने भी सक्रिय भाग लिया। चौदह वर्ष की आयु में उन्होंने तेग के जौहर दिखाकर अनेक मुगल सैनिकों को धराशायी करके अपने नाम की सार्थकता सिद्ध की। इस युद्ध में पैंदे खां तथा काले खां मारे गए और शाही सेना भाग गई।

संतान : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के पांच सुपुत्र और एक सुपुत्री थी। सुपुत्री का नाम-- बीबी वीरो था। सुपुत्रों के नाम थे-- बाबा गुरदित्ता जी, बाबा सूरज मल जी, बाबा अणीराय जी, बाबा अटल राय जी तथा श्री गुरु तेग बहादर साहिब।

देहावसान : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ६ चेत, संवत् १७०१ तद्नुसार ३ मार्च, सन् १६४४ को ज्योति-जोत समा गए।

संदर्भ-सूची :

१. प्रो. करतार सिंघ, सिक्ख इतिहास, पहला भाग, पृष्ठ २०४
२. डॉ. जीत सिंघ 'सीतल', अंम्रितसर-सिफती दा घर, पृष्ठ ७५-७७



श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा की गई जंगों का वर्णन

-डॉ. कशमीर सिंघ 'नूर'*

जब ज़ालिम ताकतों का जुल्म हद से बढ़ जाता है, जब निर्दयी शासकों को सब्र, शांति, अमन की बातें बेमानी लगती हैं और जब सहन-शक्ति को कमज़ोरी समझ लिया जाता है, तब जुल्म और शासकीय निर्दयता, निरंकुशता के विरुद्ध हथियार उठाने ही पड़ते हैं। फिर धर्म, मानवता, शांति, सच्चाई, न्याय, अधिकारों का विरोध करने वाली शक्तियों को मैदाने-जंग में चुनौती देनी ही पड़ती है।

शहीदों के सिरताज साहिब श्री गुरु अरजन देव जी जब (अपनी शहादत देने हेतु) लाहौर की ओर प्रस्थान करने लगे तो भविष्य को भांपते हुए उन्होंने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को ये शब्द कहे, "अब शस्त्र पहनने हैं और तब तक डटे रहना है, जब तक ज़ालिम जुल्म करना न छोड़ दें या खत्म न हो जाएं।" श्री गुरु अरजन देव जी को संवत् १६६३ तद्नुसार १६०६ ई कों अत्यंत यातनाएं देकर शहीद कर दिया गया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की आयु उस वक्त केवल ग्यारह वर्ष की थी।

इतिहासकार बैनर्जी के अनुसार, "श्री गुरु अरजन देव जी ने देख लिया था और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने महसूस कर लिया था कि बिना शस्त्रों के सिक्ख कौम व जत्थेबंदी का बचना मुश्किल है।"

गुरगद्दी संभालते समय श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने बाबा बुड्ढा जी को दो कृपाणें पहनाने के लिए फ़रमाया। बाबा बुड्ढा जी ने उन्हें दो कृपाणें पहनाई। एक मीरी (राजनीतिक) के चिन्ह के तौर पर और दूसरी पीरी (धार्मिक) के चिन्ह के तौर पर। गुरु जी के हुकमनामे पहुंचने की ही देर थी कि सिक्खों ने शस्त्र, घोड़े भेंट करने शुरू कर दिये। अनेक शूरवीर नौजवान गुरु जी की फौज में भर्ती हो गए। यह पहली बार हो रहा था कि सिक्ख कौम शस्त्रधारी जत्थेबंदी के रूप में संगठित होने लगी थी।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने अपने जीवन-काल में चार जंगें लड़ीं। पहली जंग श्री अमृतसर में मुखलिस ख़ान के साथ हुई। दूसरी श्री हरिगोबिंदपुर में हुई। तीसरी जंग महिराज नामक स्थान पर और चौथी व अंतिम जंग करतारपुर (जलंधर) में हुई।

पहली जंग (श्री अमृतसर) : गुरु जी श्री अमृतसर में अपनी सुपुत्री बीबी वीरो के अनंद कारज (विवाह) का प्रबंध कर रहे थे। उन्हें ख़बर मिली कि मुगल सेना हमला करने के लिए आ रही है। गुरु जी ने अपने सेवकों की सेना को साथ ले सामना करने का निर्णय किया। पहली ही झड़प में मुगलिया सेना का नायक गुलाम रसूल भाग गया और सिक्खों को प्रथम विजय प्राप्त हुई। मगर यह युद्ध अभी खत्म नहीं हुआ था। मुगल सेना की हार को देखते हुए मुखलिस ख़ान ने खुद गुरु जी के विरुद्ध कमान संभाली। सिक्खों द्वारा कड़ा मुकाबला किए जाने पर मुगलों की फौज घबरा गई परंतु

**बी-एक्स ९२५, मोहल्ला संतोखपुरा, होशियारपुर रोड, जलंधर-१४४००४, मो. ९८७२२-५४९९०*

मुखलिस ख़ान द्वारा उत्साहित किए जाने पर शाही फौज के पांव मज़बूत हो गए। सिक्खों की सेना में तो उत्साह पहले से ही भरपूर था। गुरु जी ने कमान स्वयं अपने हाथों में संभाली। सिक्खों के हौसले और भी बुलंद हो गए। शाम तक जंग होती रही, कोई फैसला न हो सका। अंत में रात घिर आई। मुखलिस ख़ान ने सोचा कि गुरु जी से ईन (अधीनगी) मनवा ली जाए। उसने रात को संदेशवाहक (कासिद) भेजा। गुरु जी ने ऐतिहासिक उत्तर दिया, "यह ठीक है कि हमें कोई मलकीयत नहीं चाहिए और न ही हमने किसी देश को जीतना है परंतु हमने अन्याय वाले शासन को चलने नहीं देना है। हम गरीबों के साथ धक्केशाही नहीं होने देंगे। मासूमों को ज़ब्र से बचाना है। हकूमत ज़ब्र के बल पर चल रही है। दुनिया के मालिक (वाहिगुरु) को अहंकार कभी नहीं भाता यानि अच्छा नहीं लगता। वह तो सच्चे मनुष्यों का साथी है, धर्म वालों का रक्षक है। अधीनता स्वीकार करने-कराने का तो प्रश्न ही पैदा नहीं होता।"

यह उत्तर पाकर मुखलिस ख़ान ने निर्णायक लड़ाई लड़ने का फ़ैसला किया। उसने कहा कि गुरु जी और उसमें ही युद्ध हो। आमने-सामने की लड़ाई में मुखलिस ख़ान गुरु जी के हाथों मारा गया। उसकी सेना पराजय स्वीकार कर वापिस लौट गई। गुरु जी वहां से सीधे गांव झबाल में चले गये तथा वहीं पर बीबी वीरो का अनंद कारज किया।

लतीफ़ लिखता है कि पंजाब के इतिहास में मुगलों और सिक्खों के बीच यह पहली जंग थी। इसके बाद खुलेआम विरोध होने लगा। दूसरी ओर सिक्खों का हौसला कई गुना बढ़ गया। उन्हें विश्वास हो गया कि जीत सच्चाई की ही होती है।

दूसरी जंग (श्री हरिगोबिंदपुर) : भगवान दास, जो उस समय श्री हरिगोबिंदपुर का मालगुज़ार था, सिक्खों के साथ एक झगड़े के दौरान मारा गया। उसके पुत्र रत्न चंद ने जलंधर के फ़ौजदार अब्दुल्ला ख़ान को एक झूठा संदेश भिजवा दिया कि गुरु जी ने मेरे पिता भगवान दास को मरवा दिया है। गुरु जी की बढ़ रही ताकत को रोकना ज़रूरी है।

गुस्से में अब्दुल्ला ख़ान ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के विरुद्ध फ़ौज तैनात कर दी और शर्त पेश की कि या इलाका छोड़ दीजिए या फिर लड़ाई के लिए तैयार हो जाइए। गुरु जी ने इलाका छोड़ने से स्पष्ट मना कर दिया। रत्न चंद और अब्दुल्ला ख़ान की फ़ौज का सिक्खों ने डटकर मुकाबला किया। बाबा गुरदित्ता जी ने भी तेग के जौहर दिखलाए। रत्न चंद व अब्दुल्ला ख़ान दोनों मारे गए। यह जंग सन् १६३० ई में हुई।

अब्दुल्ला ख़ान के बेटे ने शाहजहां के पास फ़रियाद की कि गुरु जी के विरुद्ध जंग हेतु सेना भेजी जाए। शाहजहां ने उस फ़रियाद को यह कहते हुए ठुकरा दिया कि अब्दुल्ला ख़ान ने बेवजह की लड़ाई लड़ी थी। शाही हुक्म की स्वीकृति भी उसने आवश्यक नहीं समझी थी। शाहजहां ने मुआवजा भी देने से इंकार कर दिया। अब्दुल्ला ख़ान की सारी जायदाद भी ज़ब्त कर ली गई। इस जंग से दोआबा क्षेत्र के सिक्खों में नया जोश व उत्साह पैदा हो गया। अनेक नौजवानों ने अपना जीवन गुरु जी के चरणों में समर्पित कर दिया।

गुरु जी ने श्री हरिगोबिंदपुर के युद्ध के बाद पुन: सिक्खी के प्रचार की ओर ध्यान देना शुरू कर दिया। बाबा बुड्ढा जी की खराब

सेहत के बारे में पता चला तो गुरु जी स्वयं रमदास पहुंचे। बाबा बुड्ढा जी अकाल चलाना कर गए। गुरु जी ने अपने हाथों से बाबा बुड्ढा जी का अंतिम संस्कार किया। बाबा जी ने पांच सिक्ख गुरु साहिबान को गुरगद्दी पर शोभायमान करने की रस्म अपने हाथों से पूरी की थी।

अपने आदर्श जीवन एवं उच्च आचरण द्वारा गुरु जी मालवा क्षेत्र में सिक्खी का प्रचार कर रहे थे।

तीसरी जंग (महिराज) : काबुल से आए एक मसंद साधु ने गुरु जी को बताया कि वह उनको भेंट करने हेतु दो घोड़े ला रहा था। लाहौर के नवाब अनायत उल्ला ख़ान के आदेश पर फ़ौजदार लला बेग ने वो घोड़े छीन लिए हैं। भाई बिधी चंद ने यह काम खुद संभाला तथा वे दोनों घोड़े वापिस ले आए। लला बेग और जलंधर के फ़ौजदार कमर बेग ने इसे अपना अपमान समझा तथा एक बड़ी सेना ले गुरु जी पर धावा बोल दिया। नथाणा व महिराज के निकट एक ढाब पर घमासान जंग हुई। एक अनुमान के अनुसार दोनों ओर से १२०० आदमी मारे गए। लला बेग एवं कमर बेग भी इस जंग में मारे गए। इस इलाके के राय जोधे ने गुरु जी की मदद की। गुरु जी ने जंग की जीत के बाद वहां पर एक ताल (सरोवर) बनवाया। उसे 'गुरूसर' का नाम दिया गया।

चौथी जंग (करतारपुर) १६३४ ई : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की फ़ौज में पैंदे ख़ान नाम का एक पठान था। वह साज़िशकर्ता था। वह दिल्ली व लाहौर को लिख चुका था कि यदि वे मदद करें तो गुरु जी का नामो-निशान मिटाया जा सकता है। उसने कई बार गुरु- आदेश का पालन भी नहीं किया था। गुरु जी ने पैंदे ख़ान को अपनी फ़ौज में से बाहर निकाल दिया था।

पैंदे ख़ान ने मुखलिस ख़ान के भाई काले ख़ान को गुरु जी के विरुद्ध हमला करने के लिए उकसाया और स्वयं पूरी मदद देने का आश्वासन दिया। जलंधर के फ़ौजदार कुतुबुद्दीन ने भी साथ दिया। उन तीनों ने मिलकर गुरु जी के ठिकाने करतारपुर को अपने घेरे में ले लिया। बाबा गुरदित्ता जी व भाई बिधी चंद की अगुआई में सिक्ख सेना ने डटकर मुकाबला किया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के छोटे सुपुत्र बाबा तिआग मल जी ने भी वीरतापूर्वक तेग चलाई और 'तेग़ बहादर' (श्री गुरु तेग बहादर साहिब) की उपाधि गुरु-पिता जी से प्राप्त की। पैंदे ख़ान ने घमंड में आकर सीधे तौर पर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को ललकारा। आमने-सामने की लड़ाई में उसने लगातार तीन वार किये। गुरु जी ने फुर्ती से तीनों वारों को नाकाम कर दिया। फिर उन्होंने सधे हाथों से सिर्फ एक हमला किया और पैंदे ख़ान का सिर चीरकर रख दिया। पैंदे ख़ान गुरु जी के चरणों में गिर पड़ा। गुरु जी ने उसका अंतिम समय निकट आया देख उसे कलमा पढ़ने हेतु कहा। उसके दोनों हाथ जुड़ गए और उसने कहा, "आपकी तेग ही मेरे लिए कलमा है।" गुरु जी ने अपनी ढाल द्वारा मर रहे पैंदे ख़ान को छांव दी। काले ख़ान ने भी दम तोड़ दिया। पूरी फ़ौज में घबराहट फैल गई। सारी मुगल फ़ौज भाग खड़ी हुई। इस जंग में भी गुरु जी की विजय हुई।

अब शाही फ़ौजों की ओर से आक्रमण का कोई खतरा नहीं था। गुरु जी ने कीरतपुर साहिब में ठिकाना कर लिया। शाही फ़ौजों के हुक्मरान अपनी गलती का एहसास कर रहे थे। सच्चाई व धर्म की जीत हुई। ❁

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के मीरी-पीरी सिद्धांत का अवलोकन

*-डॉ. सत्येंद्रपाल सिंघ**

प्रत्येक काल में राज-सत्ता और धर्म-सत्ता दो ऐसे शक्ति के केंद्र रहे हैं जिन्होंने सीधे तौर पर मनुष्य और समाज को प्रभावित किया है। श्री गुरु नानक साहिब ने जब सच का पंथ सामने रखा तो उन्हें भी धर्म और राज-शक्ति की चुनौतियों का विश्लेषण करना पड़ा। धर्म और अध्यात्म के इतिहास में यह पहली बार हुआ कि राज-शक्ति की खुलकर चर्चा की गयी और उसके धर्म के साथ सम्बंध को स्पष्टत: रेखांकित किया गया ताकि दुविधा समाप्त हो सके। इससे धर्म की व्यापक भूमिका स्थापित हुई और उसका क्रियाशील स्वरूप मुखर हुआ। धर्म का कर्मकांडी, एकांतवासी, पराश्रयी मिथ टूटा और आचारशील, सक्रिय तथा निडर-सम्पूर्ण पक्ष उभरा। यह सिक्ख पंथ का युगांतरकारी विचार था :

सचा अरजु सची अरदासि ॥
महली खसमु सुणे साबासि ॥
सचै तखति बुलावै सोइ ॥
दे वडिआई करे सु होइ ॥२॥
तेरा ताणु तूहै दीबाणु ॥
गुर का सबदु सचु नीसाणु ॥
मंने हुकमु सु परगटु जाइ ॥
सचु नीसाणै ठाक न पाइ ॥ (पन्ना ३५५)

श्री गुरु नानक देव जी के जन्म-काल में समाज एक तरह की अफरातफरी में फंसा हुआ है। तमाम छोटे-बड़े रियासतदार, चौधरी, राजा, जमींदार अपना हुक्म चला रहे थे और निर्बलों का शोषण कर रहे थे। भारत पर विदेशी हमलों का दौर भी आरंभ हो गया था। धर्म स्वयं दिशाहीन होकर निर्बल हो चुका था और धर्म का नेतृत्व करने वाले अपने स्वार्थ साधने के लिए लोगों को भ्रम एवं भटकाव में डाल रहे थे। श्री गुरु नानक देव जी ने एक महान उद्धारकर्त्ता के रूप में इन भ्रमों को तोड़ते हुए कहा कि अपने कष्टों को दूर करने के लिए सच्ची याचना वह है जो परमात्मा से की जाए। परमात्मा ही उनकी याचना सुनने और उनके दुखों को दूर करने में समर्थ है। परमात्मा ही कामनाओं को पूरा कर सकता है और वही होता है जो परमात्मा चाहता है। परमात्मा ही एकमात्र समर्थ शक्ति है और संसार में उसकी ही सत्ता चल रही है। उसका आदेश ही निर्णायक है। परमात्मा के निर्णय को कोई अवरुद्ध नहीं कर सकता और उसके अधीन हो जाने में ही कल्याण है।

श्री गुरु नानक देव जी ने कहा कि *"गुर का सबदु सचु नीसाणु"* अर्थात् परमात्मा का विचार सत्य स्वरूप में मुखर हो, क्रियाशील हो। इसका दायित्व उनका ठहरा जो परमात्मा की अधीनता स्वीकार करने वाले 'गुरमुख' हैं और परमात्मा के आशय को स्वीकार करने का संकल्प ले चुके हैं। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मीरी और पीरी की दो कृपाणें एक साथ धारण कीं जो *'मंने हुकमु'* और *'सचु नीसाणु'* का प्रकट रूप बनीं।

**E-१७१६, राजाजीपुरम, लखनऊ-२२६०१७, मो. : ९४१५९६०५३३*

धर्म मनुष्य की समस्त प्रकार की समस्याओं का निराकरण करने वाला स्रोत है। सांसारिक पक्ष से आंखें मूंदकर आध्यात्मिक अवस्था की बात किसी सार्थक दिशा में नहीं बढ़ती। गुरु साहिबान धर्म और संसार की सूक्ष्मताओं से भली-भांति परिचित थे, इसीलिए उन्होंने धर्म के सच्चे स्वरूप की बात की :

ऊचउ थानु सुहावणा ऊपरि महलु मुरारि ॥
सचु करणी दे पाईऐ दरु घरु महलु पिआरि ॥
गुरमुखि मनु समझाईऐ आतम रामु बीचारि ॥२॥
त्रिबिधि करम कमाईअहि आस अंदेसा होइ ॥
किउ गुर बिनु त्रिकुटी छुटसी सहजि मिलिऐ सुखु होइ ॥
निज घरि महलु पछाणीऐ नदरि करे मलु धोइ ॥
(पन्ना १८)

उपरोक्त गुरु-शबद के अनुसार आत्मिक अवस्था को श्रेष्ठ करके सुख पाने के लिए परमात्मा की कृपा चाहिए जो अपने शुभ कर्मों, सदाचरण द्वारा ही पाई जा सकती है। गुरमुख अपने मन को स्थिर करके अपने अंतर में परमात्मा को धारण करने में सफल होता है। सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण इन तीनों प्रवृत्तियों के प्रभाव में किये गये कर्मों से कोई उपलब्धि नहीं प्राप्त होती, मन भटकता रहता है। सच्चे 'दीबाणु' और उसके 'ताणु' को पहचानकर अर्थात् परमात्मा के अनुकूल आचरण में ही सहज सुख मिल सकता है। जब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मीरी और पीरी की बात करके शस्त्र धारण किए तो मसंदों को यह बात पसंद नहीं आयी क्योंकि वे ईर्ष्या से भरे हुए थे। उन्होंने गुरु साहिब की माता जी को शिकायत की कि गुरु जी पूर्ववर्ती गुरु साहिबान से अलग राह पर चल पड़े हैं, जिससे समस्याएं हो सकती हैं। उनका कहना था कि संत का शस्त्रों से क्या वास्ता? माता गंगा जी ने उन्हें यथावत कार्य करते हुए हुक्म-पालन का पाठ पढ़ाया। बाबा बुड्ढा जी द्वारा गुरु साहिब को जब शस्त्र धारण करवाए जा रहे थे तो गुरु साहिब ने कहा कि गुरु-घर में धर्म और संसार के सुख मिलकर चलेंगे। 'देग' गरीबों के लिए होगी और 'तेग' अत्याचारियों का नाश करने के लिए। उनका यह विचार मूल सिक्ख तत्वों पर ही आधारित था :

गुर सरणाई सगल निधान ॥
साची दरगहि पाईऐ मानु ॥
भ्रमु भउ दूखु दरदु सभु जाइ ॥ .
साधसंगि सद हरि गुण गाइ ॥ (पन्ना १२७१)

परमात्मा धर्म का स्रोत है, अपने आप में सम्पूर्ण और समस्त याचनाओं की पूर्ति करने वाला है। वह सारे भ्रम, भय, दुख-दर्द दूर करने वाला है। परमात्मा (धर्म) सर्वसक्षम और समर्थ होने से किसी पर आश्रित नहीं है। धर्म यदि लोगों को सत के मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित कर रहा है तो वह सत के मार्ग में आने वाली समस्त बाधाओं अर्थात् असत का नाश करने की भी ताकत रखता है। सत के मार्ग पर भयभीत होकर अथवा भ्रमित होकर नहीं चला जा सकता। 'पीरी' सत्य के मार्ग को प्रशस्त करने के लिए है। निर्भय होकर ही हरि में मन रमेगा, जिसके लिए 'मीरी' है।

धर्म का जो सत्य स्वरूप श्री गुरु नानक देव जी ने संसार के सामने रखा, श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की मीरी और पीरी की कृपाणों ने उसे प्रतीकात्मक रूप प्रदान किया। उन्होंने सिक्ख फौज की नींव रखी और सिक्खों को वीरता का पहला सबक सिखाया। वास्तव में ऐसा करके उन्होंने सिक्खों के वैयक्तिक स्तर पर चल रहे अंतर्द्वंद को भी विराम देकर सुयोग दिशा में मोड़ने का कार्य किया। उन्होंने मीरी और

पीरी को मन से भी जोड़ा। उन्होंने औरत-- ईमान, पुत्र-- निशान, दौलत-- गुज़रान और फकीर-- न हिंदू, न मुसलमान की बात कहकर धर्म और सांसारिकता को एक-दूसरे से जोड़ने का सिद्धांत स्पष्ट किया। संसार में रहकर संसार से विमुख नहीं हुआ जा सकता। संसार के व्यवहार को धर्म से जोड़कर सांसारिक कर्मों को शुभ कर्म और धर्म की शक्ति में बदला जा सकता है। पत्नी (स्त्री), जिसे भोग-विलास, मोह के रूप में देखा जाता था, उसे गुरु साहिब ने नैतिक बल में बदल दिया। इसी प्रकार धन को आवश्यकताएं पूरी करने वाला बताकर उसे सीमित कर दिया, जिससे तृष्णाओं का अंत हो गया। पुत्र को उन्होंने शुभ कर्मों की विरासत को आगे बढ़ाने में सहायक बताकर एक आवश्यक दायित्व से जोड़ा और धर्म-कर्म को भेदभाव से मुक्त कर मानवता के हित का वाहक बताया। आवश्यकता संसार-त्याग की नहीं सांसारिक बंधनों के त्याग की है; अकर्मो (वैराग्य) की नहीं आवश्यकता शुभ कर्मों की है। श्री गुरु नानक साहिब ने इसकी बड़ी सुंदर व्याख्या की है :

मुंदा संतोखु सरमु पतु झोली धिआन की करहि बिभूति ॥
खिंथा कालु कुआरी काइआ जुगति डंडा परतीति ॥
आई पंथी सगल जमाती मनि जीतै जगु जीतु ॥
आदेसु तिसै आदेसु ॥
आदि अनीलु अनादि अनाहति जुगु जुगु एको वेसु ॥
(पन्ना ६)

गुरु साहिब के काल में एक विशेष मत के लोग कानों में छेद करवाकर मुंदरा यह प्रकट करने के लिए पहन लेते थे कि उन्होंने स्वयं को संयम में कर लिया है। इसके बाद भी उनका संयम नहीं रह पाता था और मुंदरा आभूषण-मात्र बनकर रह जाती थी। श्री गुरु नानक देव जी ने कहा कि सच्चा आभूषण संतोष है जिसे धारण करना उचित है। अपनी झोली मनुष्य सुकर्मों से भरे और उन पर स्वाह मलने के स्थान पर परमात्मा के ध्यान से शरीर को सजाए। वह समझे कि मृत्यु आसान है। इसे कभी न भूले और स्वयं को परमात्मा के प्रेम और अनुभूति से अनुशासित रखे। सभी में ईश्वर का रूप देखकर उनके हित से अपने हित को जोड़े और मन में शक्ति अर्थात् परमात्मा को धारण कर जीवन को सफल बना ले। यही आरंभ से एकमात्र विधि है जीवन को जीने की।

गुरु साहिबान ने धर्म को प्रतीकात्मक परिभाषाओं से बाहर निकालकर जीवंत, गतिशील बनाया। बातों से नहीं चलता धर्म। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने इस बात को विस्तार देते हुए यह सोच सामने रखी कि वास्तविक आभूषण मुंदरा नहीं, कृपाण है। कृपाण धारण करने वाले को साहस और सुरक्षा प्रदान करती है और 'सगल जमाती' अर्थात् अन्य की रक्षा का भी कारण बनती है। श्री गुरु नानक साहिब, श्री गुरु अंगद देव जी, श्री गुरु अमरदास जी और श्री गुरु रामदास जी ने मन को मज़बूत बनाए रखने की जाच सिखाई। श्री गुरु अरजन देव जी ने मन की मज़बूती के साथ शहादत देकर साहसपूर्वक जीने की राह दिखायी। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने इस आत्मिक दृढ़ता को क्रियाशील करने के लिए *"जुगति डंडा परतीति"* अर्थात् तेग प्रदान की जिससे जीवन पाप-कर्मों से दूर रहकर सच पर टिका रह सके। गुरु साहिबान ने बताया कि सच पर टिके रहने से बड़ा बल और कुछ नहीं है :

बलु होआ बंधन छुटे सभु किछु होत उपाइ ॥

नानक सभु किछु तुमरै हाथ मै तुम ही होत सहाइ ॥ *(पन्ना १४२९)*

मीरी और पीरी ने इस बल को सम्पूर्ण करने में एक बड़ा योगदान दिया। धर्म-बल का यही सच्चा स्वरूप था कि इससे सभी तरह के निदान संभव हैं और इस बल का प्रत्येक धर्मपुरुष अनुभव और उपयोग कर सकता है :

पूरनु कबहु न डोलता पूरा कीआ प्रभ आपि ॥
दिनु दिनु चड़ै सवाइआ नानक होत न घाटि ॥
(पन्ना ३००)

वर्तमान में धर्म और राज-सत्ता को लेकर विभिन्न प्रश्न सामने आते रहते हैं। इन दोनों को स्वतंत्र और एक-दूसरे के क्षेत्र में दख़ल न देने वाला मानने के तर्क दिए जाते हैं। गुरु साहिबान ने इसे मिथ्या बताया है। *"पूरनु कबहु न डोलता"* अर्थात् पूर्णता और स्थिरता तभी आती है जब *"पूरा कीआ प्रभ आपि"* परमेश्वर उसे स्वयं सम्पूर्ण करता है। शक्ति व्यक्ति को भ्रष्ट करती है, किंतु जब शक्ति परमात्मा ने कृपा द्वारा प्रदान की हो वह *"दिनु दिनु चड़ै सवाइआ"* अर्थात् मानवता के विकास का कारण बन जाती है।

धर्म-रहित संपदा, धन, सुख-सुविधाएं, कर्मकांड सभी व्यर्थ हैं और यदि इनमें धर्म नहीं तो बचना चाहिए, यहां तक कि राजपाट से भी :

सुलतानु होवा मेलि लसकर तखति राखा पाउ ॥
हुकमु हासलु करी बैठा नानका सभ वाउ ॥
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ ॥
(पन्ना १४)

राज-सिंहासन पर आसीन होने के बाद, राज करने की सारी शक्तियां पा लेने के बाद राजा को धर्म नहीं भूलना चाहिए अर्थात् धर्म से जुड़कर रहना चाहिए। धर्म के बिना तो शक्ति, सत्ता, संपदा सभी का विनाश हो जाता है। इससे राजा और प्रजा दोनों का अहित होता है :

रईअति राजे दुरमति दोई ॥
बिनु सतिगुर सेवे एकु न होई ॥ *(पन्ना १०५७)*

यदि राजा-सत्ता धर्म का वरण नहीं करती है तो कोई भी कार्य सिद्ध नहीं होता। आज यदि शासन-व्यवस्था विफल है और शासित दुख भोग रहे हैं तो इसी कारण कि सत्ता और धर्म का सुमेल नहीं है। शासन व्यवस्था बलहीन और असहाय भी इसी लिए है कि बल अपूर्ण है। बल को सम्पूर्ण धर्म ही कर सकता है। धर्म बल को सम्पूर्णता इसलिए प्रदान करता है कि धर्म की स्थापना हो सके। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने इसे स्पष्ट रूप से घोषित किया है :

राज साज हम पर जब आयो ॥
जथा सकत तब धरम चलायो ॥ . . . १॥८॥
(बचित नाटक)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने यदि शस्त्र धारण किए तो शस्त्रों के बल से धर्म के सुमेल का व्यवहारिक आदर्श भी स्थापित किया। श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण इसका सबसे प्रमुख उदाहरण है, जिसका स्थान श्री हरिमंदर साहिब के ठीक सामने तय किया गया। इस स्थान पर बैठकर गुरु साहिब संगत से मिलते व विचार-विमर्श करते थे; गुरसिक्खों की शंकाओं और समस्याओं का निराकरण करते थे और गुरु-शबद को दृढ़ कराने का प्रयास करते थे। इस तरह श्री हरिमंदर साहिब मन को धर्म से जोड़ने और श्री अकाल तख़्त साहिब आचरण को धर्मानुकूल करने के केंद्र बन गए थे। अब सिक्खों को अपने मसले हल करने के लिए किसी अन्य शक्ति की आवश्यकता नहीं रही और वे सच्चे न्याय के प्रति आश्वस्त हो गए। इससे उनके जीवन में श्रेष्ठता आने लगी और धर्म

का खूब प्रचार हुआ। बड़ी संख्या में लोग गुरु-शरण में आकर सिक्ख बने।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब की नीति तत्कालीन मुगल शासक जहांगीर को नागवार गुज़री और उसने गुरु साहिब द्वारा शिकार के दौरान उसकी जान बचाने के किए गए उपकार के बाद भी उन्हें कैद कर ग्वालियर के किले में भेज दिया। गुरु साहिब ने वहां दो वर्ष का समय व्यतीत किया। यह जहांगीर की अल्प मति थी कि वह धर्म के सच्चे स्वरूप को नहीं जानता था और गुरु साहिब के शस्त्र धारण करने के पीछे के पवित्र मन्तव्य को समझने में असमर्थ था। उसे जब गुरु साहिब की महानता और सिक्खी आदर्शों की उच्चता का पता चला तो उसने गुरु साहिब को रिहा करने का आदेश दिया। आज भी जब सिक्ख धर्म के महान सिद्धांत मीरी-पीरी की बात की जाती है तो तमाम पेशानियों पर बल पड़ जाते हैं। इसका कारण मूलत: वही अज्ञानता है जिसका शिकार जहांगीर था।

मीरी-पीरी के सिद्धांत की पवित्रता को बनाए रखना तभी संभव है जब स्वयं हर गुरसिक्ख को इसकी मर्यादा का ज्ञान हो; गुरु-शबद के मार्ग को जानना होगा :

जिनि अकथु कहाइआ अपिओ पीआइआ ॥
अन भै विसरे नामि समाइआ ॥१॥
किआ डरीऐ डरु डरहि समाना ॥
पूरे गुर कै सबदि पछाना ॥ (पन्ना १५४)

यदि खंडे-बाटे का अमृत छककर, सिंघ सजना चाहते हैं तो मन में वह चाव हो जिसका सुंदर वर्णन श्री गुरु अरजन देव जी ने किया है :

सेवी सतिगुरु आपणा हरि सिमरी दिन सभि रैण ॥
आपु तिआगि सरणी पवां मुखि बोली मिठड़े वैण ॥
जनम जनम का विछुड़िआ हरि मेलहु सजणु सैण ॥ (पन्ना १३६)

मन में जब ऐसा चाव होगा तभी *"डरु डरहि समाना"* या निडर होकर गुरु के शबद से जुड़ सकेंगे और मीरी-पीरी के परिप्रेक्ष्य को सहज ही समझ सकेंगे। 

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब : जीवन परिचय

(पृष्ठ ९ का शेष)

रकम को बिना भेदभाव के, बिना जाति-धर्म पूछे निर्धनों में बांट देने तथा बचा हुआ सवा रुपया व मुखीए द्वारा लिखी हुई फहरिस्त गुरु जी को सौंपने पर गुरु जी ने प्रेमपूर्वक कहा, 'मुझे पहुंच गयी' तथा समझाया कि गरीबों की बांह पकड़नी सिक्ख धर्म का ज़रूरी अंग है। भाई गुरदास जी ने गुरु जी के व्यक्तित्व को उजागर करते हुए बड़ी सुंदर उपमा दी है कि लाखों बावन चंदन गुरु जी के चरण-कमलों के चरणोदक से हुए हैं :

लख गड़ाड़ि कड़ाह विचि त्रिसना दझहिं सीख परोआ।
बावन चंदन बूंद इकु ठंडे तते होइ खलोआ।
बावन चंदन लख लाख चरण कवल चरणोदकु होआ।
पारब्रहमु पूरन ब्रहमु आदि पुरखु आदेसु अलोआ।
हरिगोविंद गुर छत्रु चंदोआ ॥ (वार ३९:४)

आज समाज में फैले दुराचार, वैर-विरोध, ईर्ष्या के स्थान पर सदाचार, मित्रता तथा प्यार जाग सकता है, मात्र आवश्यकता है गुरु जी के जीवन-प्रकाश द्वारा अपने आप को देखने, पहचानने तथा समझने की। 

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का व्यक्तित्व

*-डॉ. मनमोहन सिंघ**

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को पिता-गुरु श्री गुरु अरजन देव जी ने 'पूत भगत गोबिंद का' अथवा परमेश्वर द्वारा भेजा गया बताया, जिसके द्वारा धर्म की शक्ति की स्थापना होगी और सत्य की बेल फले-फूलेगी :

वधी वेलि बहु पीड़ी चाली ॥
धरम कला हरि बंधि बहाली ॥ (पन्ना ३९६)

धर्मान्ध सुन्नी समर्थकों के बल पर शहज़ादा सलीम 'जहांगीर' के नाम से २४ अक्तूबर, सन् १६०५ ई को हिंदोस्तान का सम्राट बना। उसने राजगद्दी पर बैठते ही अपने लोगों को प्रसन्न करने के लिए गैर-मुसलमान जनता पर दमन-चक्र चला दिया। इसी संदर्भ में झूठे दोष लगाकर श्री गुरु अरजन देव जी को बड़ी क्रूर यातनाएं देकर शहीद किया गया। मुगलशाही के इसी आतंकमयी वातावरण में मात्र ग्यारह वर्ष की अल्प आयु में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब राजगद्दी पर आसीन हुए। समकालीन सिक्ख विद्वान भाई गुरदास जी का कथन है :

पंजि पिआले पंजि पीर
छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै
मूरति हरिगोबिंद सवारी। (वार १:४८)

अर्थात् पांच गुरु साहिबान ने अमृत-बाणी के पंचामृत संदेश मानवता को दिए। अब षष्ठ गुरु गुरु-पद पर आसीन हुए हैं जो महान पराक्रमी हैं। वास्तव में श्री गुरु अरजन देव जी की आत्मिक शक्ति ने ही श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का पराक्रमी रूप धारण किया है।

परिस्थितियों के अनुरूप सत्य, धर्म और आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए गुरु-पद पर आसीन होते ही श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मीरी-पीरी की दो कृपाणें धारण कीं। एक पीरी (भक्ति) की प्रतीक थी तो दूसरी मीरी (शक्ति) की।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने वीर योद्धाओं और सेनानायकों वाले सभी काम शुरू कर दिये। आप अपने शिष्यों को आध्यात्मिक शिक्षा देने के साथ-साथ सैनिक प्रशिक्षण भी देने लगे। इसी उद्देश्य के लिए आपने श्री हरिमंदर साहिब के सामने श्री अकाल तख़्त साहिब का निर्माण करवाया जहां पर आप अपने अनुयायिओं को देश की राजनैतिक परिस्थितियों से अवगत कराते और सैनिक प्रशिक्षण देते। तत्कालीन शासकों के दमन, शोषण और अत्याचार से पीड़ित जनसमूह गुरुदेव जी के संरक्षण में संगठित होने लगा। देश-विदेश से श्रद्धालु और समर्पित युवा गुरु जी की सेना में भर्ती होने लगे, जिनमें सभी धर्मों, जातियों और वर्गों के लोग थे। यहां तक कि कई मुसलमान भक्त भी गुरु जी की सेना में भर्ती हो गए और उनमें से कुछ तो सेनानायक भी बनाये गए। गुरु जी के महान उद्देश्यों की चर्चा करते हुए डंकन ग्रीनलीज ने अपने ग्रंथ 'गॉस्पल ऑफ गुरु ग्रंथ साहिब' में लिखा है-- "श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को निर्मम, शोषक और लहू-प्यासी बर्बरता द्वारा दीर्घ काल से

**८८९, फेज़-१०, मोहाली-१६००६२*

प्रताड़ित जनसमूह को मुक्ति दिलाने का कार्य आरंभ करना था।"

गुरु जी द्वारा इस प्रकार सैन्य-संगठन करना मुगल शासकों को सहन नहीं हुआ। जहांगीर ने आपको ग्वालियर दुर्ग के राजकीय कारागार में बंद कर दिया। इस सरकारी दमन को चुनौती देने के लिए पंजाब की जनता गांव-गांव से उमड़ पड़ी। आये दिन जनसमूह जत्थे बनाकर ग्वालियर जाने लगे। दिन-प्रतिदिन बढ़ते जनाक्रोश से तथा कुछ नेकदिल पुरुषों का परामर्श मानकर सम्राट जहांगीर ने दो वर्ष के पश्चात् गुरु जी को रिहा किया तथा उनके अनुरोध पर अन्य बंदी बनाये गए ५२ हिंदू राजाओं को भी मुक्त कर दिया। इस प्रकार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब 'बंदी छोड़ दाता' के नाम से भी विख्यात हुए।

सम्राट जहांगीर गुरु जी के लोक-कल्याण के आध्यात्मिक उद्देश्य को समझ गया। गुरु जी ने इस शांति-काल का सदुपयोग करते हुए उत्तरी और पूर्वी देश की यात्राएं की। आपने जम्मू-कश्मीर, उत्तर प्रदेश तथा गुजरात का विस्तृत भ्रमण किया और प्रभु के अमृत नाम की मृदुल वर्षा करते हुए जनमानस का उद्धार किया। विशेष अवसरों पर आपने दुखी और पीड़ित लोगों की यथासंभव सहायता की; कश्मीर में गिल्टी ताप से पीड़ित असहाय लोगों की सेवा-सहायता की।

मुगल सम्राट शाहजहां के शासन काल में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब को मुगलों के साथ संघर्ष करना पड़ा। मुगल शासकों के भारी सैन्य दल चार बार गुरु जी पर चढ़ आये परंतु हर बार मुंह की खाकर लौटे। अधिकतर आक्रमणकारी सेनापति और फौजदार गुरु जी के हाथों ही मौत के घाट उतारे गए। गुरु जी की इस सैन्य-शक्ति का कारण था जनमानस में उनके प्रति अटूट विश्वास और आस्था। लोग उन्हें 'सच्चा पातशाह' कहकर संबोधित करते थे। भयंकर सैन्य संघर्षों के समय भी गुरु जी अपने दैवी कर्त्तव्य को नहीं भूले।

सिक्ख गुरु जी के हर आदेश को भली-भांति समझते थे। नेकी और सत्य की शक्तियां संगठित होकर झूठी एवं भ्रष्ट शक्तियों के विरुद्ध संघर्षरत होने लगी। जाति, वर्ण और वर्ग-बांट के विचारों से ऊपर उठकर न्यायोचित व्यवस्था बनाई जाने लगी।

भीषण युद्धों और सैन्य संघर्षों के बीच भी गुरु जी ऊंचे मानवीय आदर्शों का पालन करते रहे। उनकी ओर से शत्रु पर कभी पहला वार नहीं किया जाता था। स्त्री, बालक, रोगी, शस्त्रहीन अथवा वृद्ध पर वार करना उनकी सेना के लिए मना था।

एक पठान सेनापति पैंदे ख़ान के द्वारा विश्वासघात किये जाने के कारण गुरु जी को चौथा युद्ध करना पड़ा। रण-भूमि में गुरु जी के साथ युद्ध करते हुए जब वह घायल होकर धराशायी हुआ तो गुरु जी भी घोड़े से नीचे उतर आये। उन्होंने पैंदे ख़ान के घायल सिर को अपनी गोद में ले लिया और मरने से पहले उसे मोक्ष का आशीर्वाद दिया। ऐसी भक्ति एवं शक्ति के मालिक थे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब। भाई गुरदास जी ने उनका यशोगान करते हुए कहा है :

दलि भंजन गुरु सूरमा
बड जोधा बहु परउपकारी। (वार १:४८)



श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब

-डॉ. देवेंद्रपाल कौर*

सेवा परमेश्वर के प्रति प्रेम का ही एक रूप है। वैसे तो प्रत्येक धर्म में सेवा की महत्ता मानी जाती है, परंतु सिक्ख धर्म में सेवा को जो महत्ता दी गई है वो अन्य कहीं नहीं है। सेवा मानवता की किसी न किसी रूप में भलाई करना होती है। सेवा मन को शुद्ध कर परमात्मा को पाने की एक उत्तम साधना है। यह तभी सफल है यदि निष्काम हो :

सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)

सेवा वही व्यक्ति कर सकता है, जिसमें प्रभु-नाम की प्रीति हो। सच्ची सेवा को सर्व सुखों का स्रोत कहा जाता है। सच्ची सेवा से मन शांत रहने लगता है। जब शांति मिलती है तो ज्ञान का प्रकाश होता है। जब ज्ञान का प्रकाश हो जाता है तो मन में आनंद का वास होता है। इससे मन में नई विचारधाराएं उत्पन्न हो जाती हैं, आत्मिक शक्ति आ जाती है। इस प्रकार मानव नैतिकता की तरफ झुकता है और नैतिक कर्म ही उसके मन को अच्छे लगते हैं। वह आदर्शवादी बनता है। इससे उसका हृदय निर्मल, कष्ट-रहित और कोमल बनता है। कहा जाता है कि दौलत में धन सबसे उत्तम विधा है। औषधियों में गिल्यो, अंगों में सबसे उत्तम अंग सिर को माना गया है। सुखों में सर्वोत्तम सुख सेहत, इंद्रियों में नेत्र, तृप्तियों में खुराक-तृप्ति। स्त्रियों में माता का स्थान उत्तम है। देवताओं में गुरु, सुरक्षा में पिता का स्थान उत्तम माना जाता है। सर्वोत्तम वही है जो सारे कर्त्तव्यों का पालन निष्काम भावना से करता है। निष्काम भावना से मानवता की सेवा वही व्यक्ति कर सकता है जिसमें सच्ची मानवता होगी, जिसमें सच्ची भावनाएं होंगी। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब में ये सब विशेषताएं विद्यमान थीं। श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब पांच वर्ष की आयु में गुरगद्दी पर विराजमान हुए। गुरु जी को 'अषटम बलबीरा' और 'बाला प्रीतम' भी कहा जाता है।

औरंगज़ेब ने जब श्री गुरु हरिराय साहिब को दिल्ली बुलवाया तो गुरु जी स्वयं नहीं गए। उन्होंने अपने बड़े बेटे रामराय को औरंगज़ेब के पास भेज दिया। औरंगज़ेब ने रामराय से श्री गुरु नानक देव जी द्वारा रचित बाणी के एक सलोक के संबंध में बात की कि ऐसा क्यों कहा गया है :

मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुम्हिआर ॥
घड़ि भांडे इटा कीआ जलदी करे पुकार ॥
(पन्ना ४६६)

रामराय ने डर के कारण तथा औरंगज़ेब को प्रसन्न करने के लिए 'मिटी बेईमान की' कहकर अर्थ किए। इसके बदले में औरंगज़ेब ने उसे कुछ जागीर तोहफे के रूप में दी। इससे औरंगज़ेब एवं रामराय तो प्रसन्न हो गए लेकिन श्री गुरु हरिराय साहिब अत्यंत दुखी हुए। उन्होंने रामराय को सिक्ख पंथ से बहिष्कृत कर दिया। उन्होंने अपने छोटे सुपुत्र श्री गुरु

*१०५- सी, प्रोफेसर कालोनी, सामने पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला-१४७००२

हरिक्रिशन साहिब को गुरगद्दी बख़्श दी। बाल्यावस्था में ही श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब गुरु-घर के प्रति सेवा-समर्पण की भावना में परिपक्व थे। जैसा कि गुरु-घर में सेवा-भावना, समर्पण एवं श्रद्धा को ही फल लगता है, इसी प्रकार श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब अपने उन्हीं गुणों के कारण आठवें गुरु के रूप में गुरगद्दी पर प्रतिष्ठित हुए।

उन्होंने अपना जीवन धर्म-प्रचार एवं ईश्वर-वंदना में व्यतीत किया। उनके जीवन का सबसे बड़ा सिद्धांत किसी को दुख नहीं देना था। वे उदार प्रवृत्ति के व्यक्ति थे। उन्होंने अपने जीवन का अधिकतर समय लोक-सेवा में ही व्यतीत किया। लोक-सेवा ही उनका परम उद्देश्य था :

जिनि सेविआ तिनि पाइआ मानु ॥ (पन्ना २)

जो सच्चे मन से सेवा करता है उसे ही सम्मान प्राप्त होता है। गुरु जी में नम्रता, मिठास और सेवा प्रमुख गुण थे। हमें भी श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब के जीवन और कार्यों से प्रेरणा लेकर निष्काम भाव से सेवा में लीन होकर परम सुख की अनुभूति करनी चाहिए। गुरु साहिबान ने सामाजिक झगड़ों को जड़ से खत्म करने पर ज़ोर दिया है। इसके स्थान पर सेवा और कुर्बानी को प्राथमिकता देने पर ज़ोर दिया गया है। ये गुण दैवी-प्रेम से उपजते हैं। 

कविता

छठम पातशाह

उत्तेजित शाही फौजों ने बदला लेने के लिए,
लला बेग और करम बेग का नेतृत्व पाया।
शाही फौजों को मुँह की खानी पड़ी
इस विजय के उपलक्ष्य में गुरु साहिब ने 'गुरूसर' ताल खुदवाया।
करतारपुर में अंतिम धर्म-युद्ध का समय आया।
गुरु-घर का विरोधी धीरमल, पैंदे खां के समर्थन में उतर आया।
सिक्ख फौजों का नेतृत्व बाबा गुरदित्ता जी और भाई बिधीचंद के हाथ आया।
१४ साल के बाबा तिआग मल जी ने भी अपनी तेग का हुनर दिखाया।
तभी तो गुरु जी से 'तिआग मल' ने 'तेग बहादर' का खिताब पाया।
पैंदे खां के वार को रोककर, गुरु जी ने कृपाण का वार दोहराया।
पैंदे खां गुरु-चरणों में गिर गया, उसका अंतिम समय निकट आया।
गुरु जी ने अपनी ढाल की छाया कर उसे कलमा पढ़ने का अवसर प्राप्त करवाया।
पैंदे खां ने अंतिम समय में गुरु साहिब की कृपाण को ही अपना कलमा बताया।
प्रचार के दौरान जब एक साधु ने,
आपको गुरु नानक का उत्तराधिकारी बताया।
गुरु नानक को त्यागी और आपको शस्त्रधारी घुड़सवार बताया।
तब गुरु साहिब का उत्तर सिक्ख संगत के धारण करने योग्य आया।
जवाब में गुरु साहिब ने 'जाहर फकीरी, बातन अमीरी' और शस्त्रों को अत्याचार के विरुद्ध रक्षक बताया,
बाबा नानक को जगत का त्यागी नहीं,
बल्कि माया का त्यागी बताया।
श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने धर्म-युद्ध लड़ 'दुखी'
स्वाभिमान, भाईचारे और मूर्छित मानसिकता को जगाकर,
सक्षम और पूरे गुरु का कर्त्तव्य निभाया।

-श्री सुरजीत दुखी, ३३२/९, गली जट्टां, अंदरून लाहौरी गेट, श्री अमृतसर-१४३००१; मो: ९९१४५३१२२१

साखियों में श्री गुरु नानक देव जी

*-डॉ. नरेश**

महापुरुषों के नाम के साथ साखियां-कहानियां, किस्से जोड़ना उनके श्रद्धालुओं का स्वभाव होता है। मैं ऐसी साखियों की ऐतिहासिक प्रमाणिकता के विवाद में न पड़कर इनके सार-तत्व के महत्त्व को देखना पसंद करता हूं। इन साखियों के माध्यम से जो चेतना लोक में फैलती है, मेरी दृष्टि में उसका सामाजिक महत्त्व ऐसा है कि हमें साखियों का सार ग्रहण करके अपनी सोच को बेहतर बनाना चाहिए। श्री गुरु नानक देव जी के नाम से जुड़ी ऐसी ही दो साखियां आपको सुनाता हूं :-

श्री गुरु नानक देव जी ने एक गांव में रात बिताई। भाई मरदाना जी उनके साथ थे। गांव बड़े दुष्ट लोगों का था। सवेरे गांव से निकले तो गुरु जी ने कहा, "आबाद रहे यह गांव!" अगली रात जिस गांव में बिताई वह बड़े सज्जन लोगों का गांव था। वहां से निकलते हुए श्री गुरु नानक देव जी ने कहा, "ईश्वर उजाड़ दे इस गांव को!" भाई मरदाना जी हैरान थे कि दुष्टों के गांव को बसते रहने का और सज्जनों के गांव को उजड़ने का आशीर्वाद दे रहे हैं गुरु जी! उसने गुरु जी से पूछ ही लिया उन्होंने इसका कारण। हंसकर कहने लगे श्री गुरु नानक देव जी, "भले लोग उजड़ेंगे तो भलाई का प्रसार होगा चारों ओर, बुरे एक ही जगह बसे रहेंगे तो बुराई भी सीमित रहेगी उतने ही क्षेत्र में।"

दूसरी साखी यह है कि शाम ढलने पर श्री गुरु नानक देव जी ने मन बना लिया कि रात अगले गांव में बिताएंगे। भाई मरदाना जी का मन आगे चलने का नहीं था। अनमने-से वे गुरु जी के पीछे-पीछे गांव से बाहर निकले तो उन्होंने कहा, "गुरुदेव! देख लीजिए रात उतरने ही वाली है। रात यहीं ठहर जाएं तो . . . ?" श्री गुरु नानक देव जी ने कोई उत्तर न दिया। चार कदम और चलकर भाई मरदाना जी ने कहा, "गांव वाले बता रहे थे कि इस रास्ते में सांप, बिच्छू, डाकू भी होते हैं।" श्री गुरु नानक देव जी अब भी चुपचाप चलते रहे। भाई मरदाना जी ने एक कोशिश और की। उन्होंने कहा, "गुरुदेव! मौसम भी बिगड़ रहा है। अभी हम दूर नहीं निकले हैं, लौट सकते हैं।"

श्री गुरु नानक देव जी रुक गए। उन्होंने बड़े प्यार से भाई मरदाना जी से पूछा, "तुम्हारी जेब में क्या है ? भाई मरदाना जी ने जेब में हाथ डालकर कहा, "अठन्नी है महाराज!" श्री गुरु नानक देव जी ने कहा, "लाओ मुझे दे दो।" भाई मरदाना जी ने सिक्का गुरु जी के हाथ में रख दिया। श्री गुरु नानक देव जी ने सिक्का लिया और खेतों की ओर उछाल दिया। पूछा, "भाई मरदाना जी! लौट चलें पीछे ?" भाई मरदाना जी ने कहा, "नहीं महाराज! चलते रहिए, अगले गांव में रात काटेंगे।"

मौसम तथा लूटने का भय, सांप, बिच्छू का डर, रात के उतरने की चिंता, इस सबका कारण धन संबंधी असुरक्षा ही तो था। धन के प्रति मोह तिरोहित हो गया, निर्भयता अवस्थित हो गई। 

**१६९, सेक्टर-१७, पंचकूला- १३४१०९*

सिक्ख इतिहास में श्री अकाल तख़्त साहिब का स्थान

*-स. गुरदीप सिंघ**

श्री अकाल तख़्त साहिब सिक्खों के पांच तख़्तों में से पहला एवं सर्वोच्च तख़्त है। इसकी स्थापना सिक्खों के छठम गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने की थी। प्रारंभ में इसका नाम 'अकाल बुंगा' रखा गया। 'अकाल' अर्थात् काल की परिधि से रहित; जिसे काल अथवा समय का चक्र नष्ट नहीं कर सकता। श्री अकाल तख़्त साहिब सिक्खों के लिए एक संस्था है। श्री अकाल तख़्त साहिब सिक्ख कौम का प्राण केंद्र है; पंथ को दरपेश चुनौतियों से निपटने के लिए मार्गदर्शक है और पंथक जत्थेबंदियों का केंद्र भी है।

श्री अकाल तख़्त साहिब की महत्ता सिक्ख कौम में सुप्रीम कोर्ट के रूप में मानी जाती है। श्री अकाल तख़्त साहिब के जत्थेदार द्वारा जारी किया गया 'हुकमनामा' पूरी सिक्ख कौम को मान्य होता है। श्री अकाल तख़्त साहिब सिक्ख कौम को सैद्धांतिक अगुआई देता है और सिक्ख कौम के पिछले चार सौ सालों की गौरवमयी विरासत का प्रतीक है।

श्री गुरु अरजन देव जी के अंतिम संदेश के अनुसार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने गद्दी पर बैठने के समय बाबा बुड्ढा जी से कहा कि गुरिआई रस्म के समय दो कृपाणें-- एक मीरी की और दूसरी पीरी की, धारण कराई जाएं। मीरी और पीरी शक्ति और भक्ति का सुमेल हैं। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने महसूस किया कि लोगों के दिलों से हकूमत का अनावश्यक दबदबा हटाना ज़रूरी है। जिस समय श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब द्वारा मीरी-पीरी का संकल्प रस्मी रूप से शुरू किया उस समय भारत में जब्र और ज़ुल्म का बोलबाला था। जब्र-ज़ुल्म की आंधी को खत्म करने के लिए गुरु साहिब ने श्री अकाल तख़्त साहिब की सृजना करके भक्ति और शक्ति के सुमेल को उत्साहित किया।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री हरिमंदर साहिब के सामने एक ऊंचा सिंहासन तैयार करवाया। इसकी नींव गुरु जी ने स्वयं अपने कर-कमलों द्वारा रखी और इसका निर्माण बाबा बुड्ढा जी तथा भाई गुरदास जी से करवाया :

--करि अरदासि स्री गुर तहां पुनि प्रसादु वरताइ।
प्रिथम नीव स्री गुर रखी अबिचल तखत सुहाइ ॥३८॥
किसी राज नहि हाथ लगायो।
बुड्ढे औ गुरदास बनायो।

(गुर बिलास पातशाही ६ अध्याय ८)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब के समय बादशाह जहांगीर ने ऐलान किया था कि कोई भी व्यक्ति किसी ऊंचे तख़्त पर नहीं बैठ सकता; निजी चबूतरा दो फुट से ऊंचा नहीं बना सकता। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना करते समय चबूतरे की ऊंचाई ९ फुट रखी। अन्य बादशाही और दुनियावी कई तख़्त बने और खत्म हुए, और बनते भी रहेंगे तथा खत्म भी होते रहेंगे, परंतु श्री अकाल तख़्त

**३०२, किदवाई नगर, लुधियाना-१४१००८; मो: ९८८८१२६६९०*

साहिब सदीवी है, अटल है, सदा कायम रहने वाले अकाल का तख़्त है। श्री अकाल तख़्त साहिब को श्री हरिमंदर साहिब के सामने इसी कारण स्थापित किया गया, कि शक्ति का प्रयोग करते समय धर्म के सिद्धांत (भक्ति स्वरूप) सम्मुख रखे जाएं।

गुरु साहिब श्री अकाल तख़्त साहिब पर विराजमान होकर संगत को धार्मिक उपदेश देते, नवयुवकों को शारीरिक कसरत करवाते, ढाडी जत्थे शूरवीरता की वारें गाते। दीवान के बाद गुरु जी सिक्खों की शिकायतें, मुकद्दमे, लड़ाई-झगड़े इत्यादि निपटाते। फलस्वरूप जनता ने दिल्ली, लाहौर जाना छोड़ दिया, जो कि मुगल सरकार के लिए चुनौती था। नगाड़ा बजाने की मर्यादा भी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने आरंभ की थी।

सरबत्त खालसा के सम्मेलन श्री अकाल तख़्त साहिब पर होते थे। इसके साथ ही गुरमते भी पंच-प्रणाली के अधीन पास होते थे। नवाब कपूर सिंघ की योजनाबंदी से ही श्री हरिमंदर साहिब में अनैतिक कर्म करने वाले मस्सा रंगड़ का सिर काटा गया। तरुणा दल और बुड्ढा दल भी श्री अकाल तख़्त साहिब की मर्यादा में रहा। तरुणा दल के जत्थेदार स. चढ़त सिंघ ने नवाब कपूर और स. जस्सा सिंघ आहलूवालिया की योग्य अगुआई में बड़े घल्लूघारे के समय हिम्मत और साहस का परिचय दिया। इनके बाद इनके पुत्र स. महा सिंघ ने सूझबूझ के साथ मिसलों के सहयोग से सारा कामकाज चलाया। उनके अकाल चलाना करने के बाद महाराजा रणजीत सिंघ ने सिक्ख राज्य की स्थाप्ति के मिशन को संभाल लिया। महाराजा रणजीत सिंघ के शासन काल में श्री अकाल तख़्त साहिब की सर्वोच्चता बाखूब कायम रही। एक बार महाराजा रणजीत सिंघ ने अपनी इखलाकी गलती के लिए श्री अकाल तख़्त साहिब द्वारा मिली सज़ा को सहर्ष स्वीकार किया था।

महाराजा रणजीत सिंघ के बाद श्री अमृतसर पर अंग्रेजों का कब्ज़ा हो गया। अंग्रेज सरकार महंतों और पुजारियों को बढ़ावा देने लगी। श्री दरबार साहिब की धार्मिक मर्यादा पूरी तरह भंग हो गई। तभी सिंघ सभा लहर चली। पूरे देश में बसे हुए सिक्खों के सांझे प्रयास से श्री दरबार सहिब पर सिक्खों का कब्ज़ा हुआ। श्री अकाल तख़्त साहिब की पावनता को पुन: प्रतिष्ठित किया गया। गुरमते पास हुए, योननाएं बनीं, जत्थे बनाए गए। बेअंत स्त्री, पुरुष, बच्चे, बूढ़े, जवान सभी ने कुर्बानियां देकर तरनतारन साहिब, ननकाणा साहिब आदि को आज़ाद कराया। चाबियों का मोर्चा, गुरु के बाग का मोर्चा, पंजा साहिब का मोर्चा, मोर्चा भाई फेरू, जैतो का मोर्चा आदि श्री अकाल तख़्त साहिब की अगुआई में लगते रहे। इसी बीच शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी बनी।

सिक्ख पंथ की धार्मिक और राजनीतिक रूप से सर्वोच्च संस्था होने के कारण श्री अकाल तख़्त साहिब का सिक्ख इतिहास पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। सिक्ख पंथ के बहुत-से गंभीर और नाजुक मामलों का समाधान श्री अकाल तख़्त साहिब की छत्र-छाया में हुआ है। जब तक खालसा पंथ श्री अकाल तख़्त साहिब की अगुआई में चलता रहेगा, तब तक यह चढ़ती कला में रहेगा।



श्री अकाल तख़्त साहिब

-स. जसविंदर सिंघ*

गुरु की नगरी श्री अमृतसर साहिब की पवित्र धरती पर शोभायमान श्री हरिमंदर साहिब के सामने श्री अकाल तख़्त साहिब सुशोभित है। श्री अकाल तख़्त साहिब की स्थापना छठम गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने की थी। इस पवित्र स्थान की नींव गुरु जी ने खुद रखी थी और निर्माण-कार्य भाई गुरदास जी एवं बाबा बुड्ढा जी से सपन्न करवाया था।

इस पवित्र तख़्त का निर्माण एक विशेष उद्देश्य के लिए किया गया था। दिल्ली के बादशाह के लोक-विरोधी फैसलों को चुनौती देने और अन्याय का विरोध करने के लिए श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब श्री अकाल तख़्त साहिब पर विराजमान हुए। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने मीरी-पीरी की दो कृपाणें धारण कर इतिहास को नई दिशा दी।

श्री गुरु नानक देव जी द्वारा चलाए गए निर्मल पंथ की मर्यादा का प्रसार उनके बाद के अन्य गुरु साहिबान ने बड़ी सफलता से किया। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने उस समय की नब्ज़ को पकड़ा, पहचाना और महसूस किया। गुरु जी ने कहा कि अब ज़ालिमों के जुल्मों का डटकर सामना किया जायेगा। उन्होंने सिक्ख राजनीति का पहला केंद्र श्री अकाल तख़्त साहिब पर स्थापित किया। श्री हरिमंदर साहिब जहां भक्ति का प्रतीक-स्थान है, वहीं श्री अकाल तख़्त साहिब राजसी-शक्ति का प्रतीक है। श्री अकाल तख़्त साहिब राजनीतिक एवं सामाजिक सोच-विचार का केंद्र है। धार्मिक गलतियों की धार्मिक सेवा (सज़ा) लगाना और सिक्ख रहित मर्यादा के नियमों की रक्षा के लिए पहरेदार है श्री अकाल तख़्त साहिब।

श्री अकाल तख़्त साहिब के मुखिया को 'जत्थेदार' कहा जाता है। इसके आदेशों का पालन करना पंथक रूप से सब सिक्खों के लिए आवश्यक है। श्री अकाल तख़्त साहिब के जत्थेदार द्वारा जारी आदेश 'हुकमनामा' के नाम से जाना जाता है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जत्थेदार अकाली फूला सिंघ द्वारा श्री अकाल तख़्त साहिब पर बुलाए जाने पर महाराजा रणजीत सिंघ श्री अकाल तख़्त साहिब के सामने घुटने टेककर बैठ गए और जत्थेदार साहिब द्वारा सुनाई गई कोड़े खाने की सज़ा को सहर्ष स्वीकार किया। उन्होंने अपनी गलती को नम्रतापूर्वक स्वीकार किया। श्री अकाल तख़्त साहिब से प्रथम हुकमनामा श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने जारी किया था। यह हुकमनामा था कि "सभी सिक्खों को आदेश है कि वे गुरु-घर के लिए घोड़े, शस्त्र एवं जवानियां भेंट करें।"



*संपादक, सैन खोज पत्रिका, नकोदर रोड खांबरा, ज़िला जलंधर-१४४०२६ मो: ९४१७०-९४२२३

महान शहीद भाई तारू सिंह जी

*-स. सुरजीत सिंघ**

सिक्ख कौम के महान शहीद भाई तारू सिंघ जी के बारे में प्रसिद्ध बंगाली कवि श्री रवीन्द्र नाथ टैगोर द्वारा बंगाली भाषा में लिखी गई रचना का हिन्दी अनुवाद भावार्थ सहित दिया जा रहा है जो कि इस प्रकार है :

प्रार्थनातीत दान -

भाई तारू सिंघ शहीद

पाठानेर यवे बांधिया आनिल बंदी शिखेर दल।
सुहिदगंजे रकतवरण हलिल धरणी तल।
नवाब कहिल शुन तरू सिं तौमारे शमिते चालि।
तरू सिं कहे-- मौरे केन तव लेत अवहेला मालि।
नवाब कहिल-- महावीर तुमि तौमारे न करि क्रोध।
वेसिटि काटिये दिये याउ मौरे ल शुधु अनुरोध।
तरू सिं कहे-- "करुणा तौमार हिरदय रहिल गाथा।
या चेयेछ तार किछु वेशि दिव वेणीर संगे माथा।"

भावार्थ :- जब बंदी सिक्खों के दल को पठान बांधकर लाए तो शहीद गंज (लाहौर का किला) की धरती रक्त से लाल हो गई। नवाब (ज़करिया ख़ान) ने कहा-- "तारू सिंघ सुन, क्या तुम्हें माफी चाहिए ?" यह सुनकर भाई तारू सिंघ जी ने कहा, "मैंने कौन-सी गलती की है, जिसके लिए मैं माफी चाहूं?" नवाब ने भाई तारू सिंघ जी को कहा-- "हे महा शूरवीर! आप गुस्सा (क्रोध) न करें। मेरा तो यही अनुरोध है कि आप अपने सिर के केस (बाल) काटकर दे जाओ।" जवाब में भाई तारू सिंघ जी ने नवाब को कहा-- "आपके दिल में बस, दया (करुणा) बनी रहे, परंतु जो कुछ आप चाहते हो उससे भी अधिक मैं देना चाहता हूं। आप केशों सहित संपूर्ण मेरी खोपरी भी साथ ही ले लो अर्थात् केशों सहित खोपरी उतार ली जाए।"

इस तरह अमर शहीद भाई तारू सिंघ जी ने केशों का अपमान नहीं होने दिया बल्कि अपनी खोपरी केशों सहित उतरवा ली।

**५७-बी, न्यू कालोनी, गुमानपुरा, कोटा-३२४००७ (राज.), मो. ९४१३६-५१९१७*

कविता

प्रार्थना-- व्यर्थ न जाये जीवन

भटका पथिक हूं रस्ता दिखाओ !
बेचैन मन को धीरज बंधाओ !
कुछ कर न पाता, तुम ही कराओ !
सोयी है शक्ति, तुम ही जगाओ !
सुलझा लूं हर गुत्थी, ऐसी समझ दो,
बुद्धि को मेरी शुद्ध बनाओ !
चिंताओं से तुम मुक्ति दिलाओ !
अपनी ही मर्जी के पथ पर चलाओ !

जीवन-मरुस्थल में कांटे ही कांटे,
कांटों में उलझा, तुम ही छुड़ाओ !
जीवन है सूखा, सिंचित करो तुम,
हरियाओ इसको, मधुबन बनाओ !
मन में जो पीड़ा, खुद ही समझ लो,
शब्दों को छोड़ो, भावों पे जाओ !
व्यर्थ न जाये, मेरा यह जीवन,
चाहे करो कुछ या मुझसे कराओ !

-श्री प्रशांत अग्रवाल, ४०, बजरिया मोतीलाल, बरेली-२४३००३ (उ. प्र.)। मो : ०९४११६०७६७२

महान बलिदानी भाई मनी सिंह जी

*-डॉ. राजेंद्र सिंह 'साहिल'**

भाई मनी सिंह जी उन खास शख़्सियतों में से एक हैं जिन्होंने गुरु साहिबान की शरण में रहकर जीवन-जुगत सीखी और गुरु साहिबान के बाद अपने कुशल नेतृत्व से सिक्खों का मार्गदर्शन किया।

गुरसिक्ख परिवार में जन्म : भाई मनी सिंह जी के जन्म एवं जन्म-स्थान के विषय में सिक्ख इतिहास-ग्रंथ एकमत नहीं दिखाई देते। 'महान कोश' कर्ता भाई कान्ह सिंह नाभा समेत अनेक इतिहासकार मानते हैं कि भाई मनी सिंह जी का जन्म पटियाला क्षेत्र के गांव कैबोवाल में सन् १६६८ ई. में हुआ। इस गांव के खंडहरों का टीला आज भी लौंगोवाल गांव के निकट स्थित है।

'प्रमुक्ख सिक्ख शखसीअतां' पुस्तक में डॉ. जसबीर सिंह ने भाई सेवा सिंह भाट की रचना 'शहीद बिलास' के आधार पर भाई मनी सिंह जी के जन्म, जन्म-स्थान एवं वंश-परंपरा का तर्क-आधारित निर्धारण किया है। इनके अनुसार भाई जी का जन्म सुलतानपुर के निकट स्थित गांव अलीपुर में चैत्र शुक्ल पक्ष द्वादशी, दिन रविवार, बिक्रमी संवत् १७०१ मुताबिक मार्च के अंतिम सप्ताह में सन् १६४४ ई. में हुआ।

वंश-परंपरा के अनुसार भाई मनी सिंह जी के परिवार का संबंध छठम पातशाह साहिब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से जुड़ता है। भाई साहिब के दादा भाई बलू राव छठम पातशाह के अनन्य सिक्ख एवं सिपहसालार थे। भाई बलू राव पिपली साहिब, श्री अमृतसर की जंग में १५ अप्रैल, १६३४ ई. को शहीद हुए थे। भाई बलू राव के १२ पुत्र थे। इनमें से दूसरे नंबर पर थे-- भाई माई दास। भाई माई दास के दो विवाह हुए थे। पहली पत्नी से सात एवं दूसरी पत्नी से पांच पुत्र हुए थे। भाई मनी सिंह जी पहली पत्नी के सात पुत्रों में से एक थे। इस प्रकार भाई साहिब १२ भाई थे और सभी ने सिक्ख आदर्शों की रक्षा के लिए कुर्बानी दी।

बालपन एवं चार गुरु साहिबान की छत्र-छाया मिलना : भाई मनी सिंह जी के बचपन का नाम 'मनीराम' था और आपको प्यार से 'मनीआ' कहकर बुलाया जाता था। भाई मनीराम जब १३ वर्ष के हुए तो पिता भाई माई दास उन्हें लेकर सप्तम पातशाह श्री गुरु हरिराय साहिब के दरबार में कीरतपुर साहिब आये। सप्तम पातशाह इस सुंदर बालक को देखकर अति प्रसन्न हुए और "मनीआ इह गुनीआ होवेगा बीच जग सारे" कहकर उसे गुणवान होने का आशीर्वाद दिया। भाई मनीराम गुरु-दरबार में रहकर सेवा आदि के कार्य करते हुए जीवन सफल करने में लग गये। इन्हीं दिनों १५ वर्ष की आयु में भाई मनीराम का विवाह खैरपुर के भाई लखी राय की पुत्री माता सीतो से हो गया।

भाई मनीराम निरंतर गुरु-घर की सेवा करते रहने से गुरु-परिवार के प्रिय बन गये। सप्तम पातशाह श्री गुरु हरिराय साहिब के ज्योति-जोत समाने के बाद भाई मनीराम आठवें

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब-१४११०१, मो: ९४१७२-७६२७१*

पातशाह श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब की सेवा में आ गये। बाल-गुरु जब सन् १६६४ ई में दिल्ली गये तब भाई मनीराम साथ थे। जब आठवें पातशाह ज्योति-जोत समा गये तब भाई मनीराम बकाला गांव में निवास कर रहे श्री गुरु तेग बहादर साहिब के पास चले आये। कुछ समय अपने गांव अलीपुर में रहने के बाद श्री गुरु तेग बहादर साहिब के गुरगद्दी पर विराजमान होने पर, भाई मनीराम पुन: श्री अनंदपुर साहिब आकर गुरु-सेवा में लीन हो गये।

नवंबर सन् १६७५ ई में नवम् पातशाह जब औरंगजेब के बुलावे पर दिल्ली गये तो भाई मनीराम को पीछे श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के पास ही रुकने का हुक्म मिला। भाई मनीराम के बड़े भ्राता भाई दिआला जी नवम् पातशाह के साथ दिल्ली गये। गुरु जी ने चांदनी चौक में शीश कटाकर शहादत दी तो भाई दिआला जी उबलती देग में उबाल कर शहीद कर दिये गये।

दशमेश पिता की सेवा में भाई मनीराम : नवम् पातशाह की शहादत के बाद भाई मनीराम श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की सेवा में आ गये। दशमेश पिता सिक्खों को शस्त्रधारी बनाने में लगे हुए थे। गुरु जी के इन प्रयासों में भाई मनीराम पेश-पेश रहे। आप शीघ्र ही चुस्त-फुर्तीले, युद्ध-कला में कुशल योद्धा के रूप में उभरे।

भाई साहिब पाउंटा साहिब में भी दशमेश पिता के साथ ही रहे। यही नहीं, आप गुरु जी के साथ देहरादून भी गये। यहां जब गुरबख़्श नाम के अहंकारी 'साधु' ने दशमेश पिता के प्रति अशुभ वचन बोले तो भाई साहिब ने अपने खंडे से उसका सिर उड़ा डाला था।

भाई मनीराम ने दशमेश पिता के साथ प्रत्येक युद्ध में उत्साह से भाग लिया। विशेष रूप से आपने 'भंगाणी के युद्ध' (१६८७ ई) में विशेष जौहर दिखाये। इन जंगों में भाई मनीराम एक दिलेर योद्धा के रूप में उभरे। भाई मनीराम की अद्वितीय सेवा से प्रसन्न होकर दशम पातशाह ने संवत् १७४८ वि. वैसाखी वाले दिन (सन् १६९१ ई) आपको गुरु-दरबार का 'दीवान' नियुक्त किया।

योद्धा भी और विद्वान भी : भाई मनीराम तेग के साथ-साथ कलम के भी धनी थे। आपको लंगर आदि की सेवा से जब भी फुरसत मिलती आप गुरबाणी का अभ्यास आरंभ कर देते। गुरमति एवं गुरबाणी को समझने के लिए आपने भाई गुरदास जी की वारों का गहन अध्ययन किया। जब दशमेश पिता ने देखा कि आपकी रुचि अध्ययन-चिंतन की ओर अधिक है, तब आपको लंगर की सेवा से मुक्त करके धर्म-ग्रंथों के अध्ययन-विश्लेषण की सेवा सौंपी गई। थोड़े ही समय में भाई मनीराम संस्कृत एवं फारसी के उत्कृष्ट विद्वान बन गये। गुरु साहिब ने आपको एक पाठशाला खोल दी जहां आप सिक्खों को धार्मिक विद्या देने लगे। आपकी श्रेष्ठ विद्वता से प्रसन्न होकर दशम पातशाह ने आपको 'ज्ञानी' का खिताब बख़्शा। सिक्ख धर्म के ज्ञानियों में आपका स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है।

ज्ञानी गिआन सिंघ ने अपने ग्रंथ 'तवारीख गुरू खालसा' में भाई मनीराम की विद्वता को विशेष रूप से सराहा है और आपकी गणना दशमेश पिता के बावन दरबारी कवियों में की है :

कवी बवंजा थे गुर पास।
उन मै गनना इनी की खास। (पंथ प्रकाश)

भाई मनीराम से भाई मनी सिंघ : सन् १६९९ ई की वैसाखी वाले दिन जब दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'खालसे' की सृजना की तो उसी दिन भाई मनीराम ने भी लगभग ५५ वर्ष की आयु में अमृत छका और भाई मनीराम

से भाई मनी सिंघ हो गये।

निज कर ते गुर अंम्रित दीयो।
मनीए थी, सिंघ मनीए कीयो। (शहीद बिलास)

इसी सौभाग्यशाली दिन भाई मनी सिंघ जी के भाइयों एवं पांच सुपुत्रों ने भी अमृत-पान किया और सिंघ सज गये।

श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर की प्रबंध-सेवा : इन्हीं दिनों श्री दरबार साहिब, श्री अमृतसर का प्रबंध देखने वाले महंत सोढी जी का देहांत हो गया। उसके बाद उनका पुत्र निरंजन राय गद्दी पर बैठा परंतु वह अपने संप्रदाय को एकजुट न रख सका। इसी वजह से श्री हरिमंदर साहिब का प्रबंध सुचारू रूप से चलाने वाला कोई न रहा। श्री अमृतसर की संगत ने दशम पिता से आग्रह किया कि श्री हरिमंदर साहिब की प्रबंध-व्यवस्था दुरुस्त करने के लिए सिंघ भेजे जाएं। दशम पातशाह ने भाई मनी सिंघ जी को पांच अन्य सिंघों-- भाई भूपत सिंघ, भाई गुलज़ार सिंघ, भाई कौर सिंघ, भाई दान सिंघ एवं भाई कीरत सिंघ के साथ श्री हरिमंदर साहिब की मर्यादा बहाल करने के लिए भेजा। भाई साहिब ने इस कर्त्तव्य को बाखूबी निभाया।

श्री अमृतसर निवास के दौरान भाई मनी सिंघ जी कई बार श्री अनंदपुर साहिब आये और गुरु-चरणों में हाज़िरी भरी।

सम्पूर्ण परिवार का आत्म-बलिदान : भाई मनी सिंघ जी का पूरा परिवार गुरु-घर की सेवा में सदा तत्पर रहा। भाई साहिब के सभी भाइयों ने गुरु-कार्य में जीवन न्योछावर किया। आपके पांचों सुपुत्र प्रसिद्ध चमकौर की जंग (दिसंबर, १७०४ ई) में दोनों बड़े साहिबजादों-- बाबा अजीत सिंघ जी और बाबा जुझार सिंघ जी के साथ शहीद हुए। मदमस्त हाथी को 'नागणी' के एक ही वार में भगाने वाले भाई बचित्तर सिंघ भी भाई मनी सिंघ जी के ही सुपुत्र थे।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की हजूरी बीड़ को लिपिबद्ध करना : १७०४ ई में जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने श्री अनंदपुर साहिब छोड़ा तब भाई मनी सिंघ जी को माता सुंदरी जी एवं माता साहिब कौर जी के साथ दिल्ली जाने का आदेश दिया। आप माताओं के साथ दिल्ली में रहे। गुरु साहिब जब श्री दमदमा साहिब, तलवंडी साबो पहुंचे तो आप भी माताओं के साथ गुरु-दर्शन को श्री दमदमा साहिब आ गये। दमदमा साहिब निवास के दौरान दशमेश पिता ने पावन बीड़ में नवम पातशाह की बाणी सम्मिलित करके पुन: लिपिबद्ध करने के लिए भाई मनी सिंघ जी को चुना। गुरु जी बोलते थे और भाई साहिब लिखते थे। इस प्रकार श्री गुरु ग्रंथ साहिब की नई एवं सम्पूर्ण बाणी वाली (दमदमी) बीड़ तैयार हुई। पहली आदि बीड़ श्री गुरु अरजन देव जी ने भाई गुरदास जी से लिखवाई थी।

दशम पातशाह जब दक्षिण में जाने लगे तो उन्होंने भाई मनी सिंघ जी को श्री हरिमंदर साहिब की सेवा-संभाल करते रहने का हुक्म दिया। भाई साहिब श्री अमृतसर आ गये और लंबे समय तक सोढी हरि के पुत्रों-पौत्रों से श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा करने के लिए संघर्ष करते रहे। इस प्रकार भाई साहिब ने 'मीणे महंतों' के षड्यंत्रों से श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा की।

बाबा बंदा सिंघ बहादर के काल में भाई मनी सिंघ जी : नांदेड़ में दशमेश पिता की गुरु-आज्ञा सिर आंखों पर धारण करके बाबा बंदा सिंघ बहादर पंजाब आये और सिक्खों को नेतृत्व प्रदान किया। बाबा जी की विजयों ने सिक्खों का एक बार फिर से बोलबाला कर दिया। इस काल में भाई साहिब का पूरा सहयोग बाबा बंदा सिंघ बहादर को मिला।

बंदई खालसा एवं तत्त खालसा का विलय : सन् १७१६ ई में बाबा बंदा सिंघ बहादर की शहादत के बाद खालसा पंथ 'बंदई खालसा' और 'तत्त खालसा' में विभाजित हो गया। एक गुट बाबा बंदा सिंघ को अपना नेता मानने लगा तथा 'बंदई खालसा' कहलाया और दूसरा गुट 'तत्त खालसा' कहलाया। सिक्खों में पड़ी इस फूट के कारण सभी सिक्ख नेता दुखी थे। ऐसे में माता सुंदरी जी ने दोनों गुटों में समझौता करवाने की जिम्मेदारी भाई मनी सिंघ जी को सौंपी। भाई मनी सिंघ जी ने सूझबूझ दिखाते हुए दोनों गुटों को श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर की परिक्रमा में आमंत्रित किया। भाई साहिब ने एकता करवाने के उद्देश्य से एक युक्ति सुझाई। दो पर्चियां बनाई गईं। एक पर 'तत्त खालसा' का उद्घोष लिखा गया और दूसरी पर 'बंदई खालसा' का उद्घोष लिखा गया। दोनों पर्चियां अमृत सरोवर में छोड़ी गईं। थोड़ी देर में बंदई खालसे की पर्ची डूब गई और तत्त खालसे को विजयी घोषित कर दिया गया परंतु बंदई खालसे ने यह फैसला मानने से इंकार कर दिया।

इसके बाद बंदई गुट के पहलवान भाई संगत सिंघ और तत्त खालसा के पहलवान भाई मेहर सिंघ में कुश्ती करवाई गई, जिसे भाई मेहर सिंघ ने जीता। बंदई खालसा वालों ने अपनी जिद छोड़ दी। इस तरह भाई मनी सिंघ जी के प्रयासों से सारा खालसा पंथ एक हो गया।

भाई मनी सिंघ जी की शहादत : यह वो समय था जब सिक्खों को श्री हरिमंदर साहिब में कोई भी आयोजन करने के बदले में मुगल बादशाह को 'ज़ज़िया' देना पड़ता था। राजनीतिक तौर पर अव्यवस्थित रहने के कारण सिक्ख लंबे समय से श्री हरिमंदर साहिब में बंदी छोड़ दिवस (दीवाली) नहीं मना पाये थे। सन् १७३३ ई में पंथ ने श्री हरिमंदर साहिब में बंदी छोड़ दिवस मनाने की योजना बनाई। इसके एवज़ में लाहौर के सूबेदार ज़करिआ ख़ान को दस हज़ार रुपये 'ज़ज़िया' के रूप में देने का समझौता किया गया।

इतने में भाई मनी सिंघ जी को गुप्त सुचना प्राप्त हुई कि लाहौर दरबार और खालसा विरोधी शक्तियां षड्यंत्र रच रही हैं कि बंदी छोड़ दिवस पर एकत्र हुए सिक्खों को घेर कर एक साथ खत्म कर दिया जायेगा। भाई साहिब ने तुरंत संदेशे भेजकर सिक्खों को आने से रोक दिया। बंदी छोड़ दिवस वाले दिन कोई सिक्ख श्री अमृतसर न आया।

इस पर लाहौर का सूबेदार ज़करिया ख़ान झल्ला उठा। उसने भाई मनी सिंघ जी को गिरफ्तार करने का हुक्म दिया। भाई साहिब साथियों समेत गिरफ्तार करके लाहौर लाये गये। फतवों की आड़ में भाई गुलज़ार सिंघ, भाई भूपत सिंघ, भाई मुहकम सिंघ, भाई चंन सिंघ, भाई कीरत सिंघ, भाई आलम सिंघ, भाई संगत सिंघ, भाई कान्ह सिंघ आदि पर अनेक अत्याचार किये गये। भाई गुलज़ार सिंघ को उल्टा लटका कर उनकी जीते-जी खाल उतारी गई। भाई भूपत सिंघ की आंखें नोचकर उन्हें चरखड़ी पर चढ़ा दिया गया।

भाई मनी सिंघ जी को बंद-बंद काटकर शहीद करने का फतवा दिया गया। २५ आषाढ़, संवत् १७९१ (सन् १७३४) वाले दिन लगभग नब्बे वर्ष की आयु वाले भाई मनी सिंघ जी को लाहौर के निखास चौक में शरीर का एक-एक बंद काटकर शहीद कर दिया गया। लाहौर किले के निकट जहां भाई मनी सिंघ जी को शहीद किया गया था, वहां गुरुधाम 'शहीद गंज साहिब' सुशोभित है। 

शहीदी साका बजबज घाट के नायक : बाबा गुरदित्त सिंघ

*-सिमरजीत सिंघ**

ज़िला एवं तहसील तरनतारन के ब्लाक चोहला साहिब का गांव सरहाली है। यह गांव तरनतारन-हरीके सड़क पर है। रेलवे स्टेशन पट्टी इस गांव से ७ किलोमीटर है। इस गांव में संधू भाईचारे के लोगों का निवास है। संधुयों के बारे में कहा जाता है कि इनका मुख्य ठिकाना श्री अमृतसर तथा लाहौर ज़िले थे। यहां से उठकर सतलुज से ऊपर की ओर अम्बाला के पहाड़ों के नीचे, पश्चिम में गुजरांवाला तथा पूरब में सियालकोट तक फैल गए। संधू भाईचारे के लोग अपनी पृष्ठभूमि सूर्यवंशी राजा रघु से मानते हैं। कहा जाता है कि कादर ने विस्माद में आकर एक बहुत ही सुंदर कन्या की उत्पत्ति की। जब उसकी उम्र ब्याह योग्य हुई तो देवताओं व राजाओं ने उसके साथ विवाह करने की कोशिश की। राजा रघु विवाह करवाने में सफल हो गया। इस राजा को इतना बहादुर माना जाता था जितना कि सूरज, इसलिए इसको रघु कहा जाता था। इस घटना का ज़िक्र करते हुए श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी बचित्र नाटक में वर्णन करते हैं :

साध करम जो पुरख कमावै ॥
नाम देवता जगत कहावै ॥
कुक्रित करम जो जग मैं करहीं ॥
नाम असुर तिन को सभ धरहीं ॥ . . .
तिन ते होत बहुत न्रिप आए ॥
दच्छ प्रजापति जिन उप जाए ॥
दस सहंस्र तिहि ग्रिह भई कंनिआ ॥
जिह समान कह लगै न अंनिआ ॥
काल क्रिआ ऐसी तह भई ॥
तो सभ बिआहि नरेसन दई ॥

रघु की औलाद रघुवंशी कहलाती है। इस रघु ने समूचे भारत पर राज्य किया था। संधुयों का विचार है कि उनके पूर्वज़ महमूद गज़नवी के साथ कैद होकर या किसी अन्य कारणवश गज़नी चले गए थे। तेरहवीं सदी में वे फिर वापिस आ गए या फिरोज़शाह के समय अफगानिस्तान से भारत की तरफ आ गए तथा माझा क्षेत्र में लाहौर के पास आबाद हो गए। माझे में सरहाली, वलटोहा, भड़ाणा, मनावां आदि संधुयों के प्रसिद्ध गांव हैं। सरहाली गांव के ही निवासी पूहले ने अपने नाम पर पूहला गांव आबाद किया था।

महाराजा रणजीत सिंघ की फौज़ में संधू भाईचारे का बहादुर जरनैल स. रतन सिंघ सरहाली गांव का निवासी था। महाराजा रणजीत सिंघ की मृत्यु के बाद पंजाब पर अंग्रेजों का राज्य हो गया। पंजाब पर अंग्रेजों का राज्य होने के साथ ही सारा भारत अंग्रेजों के अधीन हो गया। अंग्रेजों द्वारा स. रतन सिंघ को अपने पक्ष में करने के लिए जागीर की पेशकश की गई। स. रतन सिंघ ने अंग्रेजों की पेशकश को ठुकराकर खुद को सिक्ख राज्य का सच्चा सिपाही साबित किया था। स. रतन सिंघ का पुत्र स. हुकम सिंघ सरहाली में ही कृषि-कार्य करके मेहनत की पावन कमाई करता रहा। स. हुकम सिंघ के घर १८६१ ई. में बाबा गुरदित्त सिंघ का जन्म हुआ। ६ वर्ष की उम्र में ही आपने एक सन्यासी से संध्या लेकर 'पंज ग्रंथी' से गुरबाणी का पाठ करना सीख लिया। एक बार आप

**संपादक, गुरमति ज्ञान/गुरमति प्रकाश*

रिश्तेदारी में विवाह पर गए जहां आपने एक बहुत ही दुराग्राही (जिद्दी) घोड़ी को काबू कर सवारी की। यह देखकर सभी हैरान हो गए। एक आदमी ने आपको फौज में भर्ती होने की सलाह दी। आप फौज में भर्ती होने के लिए चले गए किंतु अंग्रेज अफसर ने उम्र छोटी होने के कारण आपको भर्ती करने से इन्कार कर दिया।

अंग्रेजों ने भारत को लूटना शुरू कर दिया। यहां का कच्चा माल कम दाम पर इंग्लैंड ले जाया जाता और तैयार माल फिर यहां की मंडियों में लाकर महंगे भाव बेचा जाता। लोगों की ज़रूरत की हर वस्तु विदेश से आने लग गई जिसके लिए देशवासियों को भारी कीमत चुकानी पड़ती थी। जनसाधारण पर तरह-तरह के टैक्स लगाए जाने लगे। भारतीय लोगों को नफ़रत कर उनसे गुलामों की तरह काम लिया जाता था। अगर कोई अंग्रेजों की गलत नीतियों के विरुद्ध आवाज़ उठाने की कोशिश करता तो उसको घोर यातनायें दी जाती। कृषि-कार्य में पड़ रहे रोज़ के घाटे के कारण किसान कृषि-कार्य छोड़कर दूसरे देशों में जाकर मेहनत-मज़दूरी करने लगे। सिक्खों की परवाज़ कनाडा की तरफ हुई। कहा जाता है कि कनाडा के शहर कैलगरी में सबसे पहले बसने वाला सिक्ख स. हरनाम सिंघ हरी था। इसके नाम पर कनाडा में एक पार्क भी बना हुआ है। वैनकुवर शहर में बसने वाला पहला सिक्ख स. केसर सिंघ फौजी माना जाता है जो १८९७ ई में वैनकुवर पहुंचा था। स. हुकम सिंघ ने भी सरहाली से मलाया जाकर ठेकेदारी करनी शुरू कर दी। स. गुरदित्त सिंघ १२ वर्ष की बाल्यावस्था में अपने पिता के पास मलाया चले गए। १८८३ ई में आपकी शादी हो गयी। आपके घर औलाद न होने कारण आपने दूसरी शादी कर ली, जिससे एक लड़के ने जन्म लिया। यह बच्चा तीन महीने का ही मर गया। कुछ समय बाद आप जी की पत्नी दूसरे लड़के को जन्म देकर परलोक सिधार गई। बच्चे का पालन-पोषण बाबा गुरदित्त सिंघ को ही करना पड़ा।

१९०० ई तक बहुत सारे पंजाबी मलेशिया, थाईलैंड, हांगकांग, शिंघाई, जावा, कनाडा, मनीला, पूर्वी अमेरिका, आस्ट्रेलिया व इंग्लैंड में पहुंचकर अपने व्यवसाय शुरू कर चुके थे। कनाडा की १९८० ई में हुई जनगणना के अनुसार वहां की आबादी में लगभग २००० भारतीय थे जिनमें से ज्यादा सिक्ख थे। इन देशों में ही अंग्रेजों ने अपनी बस्तियां कायम की हुई थीं। इन सभी देशों पर अंग्रेजों का राज्य था इसलिए एक देश से दूसरे देश में जाने के लिए कोई मुश्किल नहीं आती थी और न ही किसी प्रकार के वीज़े की ज़रूरत पड़ती थी। कुछ समय बाद हालात बदलने शुरू हो गए। सिक्खों/पंजाबियों का मेहनती स्वभाव होने के कारण ये अंग्रेजों से ज्यादा काम करते और ज्यादा पैसा इकट्ठा करते। इनके अलग सभ्याचार व बोली, शैली के कारण भी अंग्रेज कर्मचारी इनसे ईर्ष्या करने लग गए। वे समझते थे कि सिक्खों के मेहनती स्वभाव तथा वफ़ादार होने के कारण उनकी रोज़ी-रोटी छिन सकती है। जब ऐसा सलूक चीनियों व जापानियों के साथ होता तो सरकार उनके हक में आ जाती परंतु सिक्खों के साथ ऐसा न किया जाता। सिक्खों को वहां से निकालने के लिए तरह-तरह की अफवाहें भी फैलाई जाती। अंग्रेज कर्मचारियों के मन में यह एहसास पैदा किया जाने लगा कि पंजाबी लोग उनका कारोबार छीन लेंगे और वे बेरोज़गार हो जाएंगे। अंग्रेजों की सख्तियों का दौर बढ़ता गया तथा १९०७ ई में भारतीयों से वोट देने का अधिकार भी छीन लिया। १२ अगस्त, १९०७ ई को भारतीयों के कनाडा में प्रवेश

करने पर रोक लगाने के लिए 'एशीएटक एक्सकियून लीग' नामक जत्थेबंदी कायम कर दी गयी। कुछ समय बाद ही बड़ी संख्या में अंग्रेज़ इसके सदस्य बन गए। इन्होंने अंग्रेज सरकार की शह पर पंजाबियों/सिक्खों से भेदभाव तथा नफ़रत करनी शुरू की। पंजाबी कर्मचारियों पर तशद्दुद का दौर शुरू हो गया। अंग्रेजों द्वारा पंजाबियों को निकाल देने की मुहिम शुरू हो गयी तथा इसके लिए प्रयत्न पूरे ज़ोरों पर होने लगे। ८ जनवरी, १९०८ ई को कनाडा सरकार ने कानून पास कर दिया कि कनाडा की धरती पर मज़दूरी करने वही शख़्स आ सकता है जो अपने देश से अटूट ज़हाज़ी सफर द्वारा यहां पहुंचेगा। इस कानून के बनने से भारतीयों, खासकर सिक्खों पर सीधा असर पड़ता था। कनाडा में रह रहे सिक्खों को हांडूरस भेजने का प्रयत्न भी किया गया जो सफल न हो सका। इस साज़िश के प्रति सिक्खों को जागरूक करने के लिए मस्तूआणा के भाई (संत) तेजा सिंघ ने संघर्ष किया।

१९१० ई तक १०००० के लगभग भारतीय कनाडा पहुंच चुके थे। वे वहां मेहनत करके अपना गुज़ारा करते और भारत रहते साक-संबंधियों की भी आर्थिक मदद करते थे। सिक्खों को कनाडा में से निकालने के लिए आवास सम्बंधी एक नया कानून ९ मई, १९१० ई को अस्तित्व में लाया गया। इसके अनुसार-- "गवर्नर जनरल कनाडा द्वारा तिथि ९ मई, १९१० पी सी एम-९२० के अनुसार जारी हुक्म के तहत, इस दिन से कनाडा में आने वालों के लिए यह ज़रूरी होगा कि वे कनाडा पहुंचने के लिए अपने देश या जिस देश के वे नागरिक हों, से कनाडा के लिए सीधा लगातार सफर करें और इसके लिए उस देश में से या पेशगी रकम से कनाडा से टिकट खरीदी गई हो।"

"९ मई, १९१० ई के ही पी सी एम-९२६ के अनुसार-- "सरकारी हुक्म के तहत किसी भी एशियाई मूल के किसी भी ऐसे व्यक्ति को कनाडा में दाख़िल होने की इजाज़त नहीं होगी जिसके पास सही रूप में २०० डालर न हों। ऐसे एशियाई देश, जिनके बारे में विशेष संवैधानिक नियम हों या कनाडा की सरकार के साथ विशेष संधि या समझौता हो, के नागरिक के लिए इस कानून की छूट होगी।"

इस कानून के बनने से विदेशों में रह रहे पंजाबियों का अपने परिवारों से मेल-मिलाप खत्म होने लगा। ये परिवार अपने रिश्तेदारों के बिछुड़ने के भय से बेहाल हो गए। सिक्खों के मन में इस धक्केशाही के विरुद्ध गुस्सा भर आया। पंजाबियों ने इसके विरुद्ध आवाज़ उठाने की योजना बनायी। सिक्खों द्वारा इस कार्य की पूर्ति हेतु खालसा दीवान सोसायटी कायम की गई। अंग्रेजों की धक्केशाही के विरुद्ध उठी इस लहर को 'गदर लहर' के नाम से सम्बोधित किया जाने लगा। सारी दुनिया में बसते सिक्खों ने इस लहर को प्रफुल्लित करने के लिए भरपूर योगदान डाला। २४ दिसंबर, १९१३ ई को ब्रिटिश कोलंबिया की उच्च अदालत ने ३५ नये पहुंचे सिक्खों को वहां रहने की आज्ञा दे दी। इसको सिक्खों ने अपनी प्रथम विजय के रूप में लिया। फिरोज़पुर निवासी भाई तखत सिंघ ने विदेशों में गए हक-सच की मेहनत करके रोज़ी-रोटी कमाने वाले सिक्खों को अंग्रेजों की ज्यादतियों के विरुद्ध लामबंद करना शुरू कर दिया।

सन् १९१३ ई में बाबा गुरदित्त सिंघ हांगकांग आकर ठेकेदारी करने लग गए। आपने पहले ठेकेदारी का कारोबार करते हुए पंजाबियों व भारतीयों को मलाया तथा पूरब के दूसरे स्थानों पर मंदहाली में मेहनत-मज़दूरी करते हुए देखा था। इनको अपने सिक्ख होने पर बहुत गर्व था। अपने देशवासियों को गुलामों

की तरह जीवन-यापन करते देख इनके मन पर गहरी चोट लगी। इनके मन में अपने हमवतनियों के लिए कुछ करने का विचार चलता रहता।

जनवरी, १९१४ ई में हांगकांग के गुरुद्वारा साहिब में दशमेश पिता श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी का प्रकाश दिवस मनाया गया। सारे ही दीवान में एक भी सिक्ख फौजी हाज़िर नहीं था। पड़ताल करने पर बात सामने आई कि सरकार द्वारा सिक्ख फौजियों को गुरुद्वारा साहिब जाने से रोक दिया गया है। इस हृदयविदारक घटना के बारे में बाबा गुरदित्त सिंघ ने जोशीला भाषण दिया तथा इस बात का निश्चय किया कि "यह गुलामी नामक रस्सी भारतीयों के गले से जब तक नहीं उतरती तब तक ऐसी पाबंदियों का अंत नहीं होगा, इसलिए हम सब को जत्थेबंद होने की ज़रूरत है।"

सन् १९१४ ई में प्रथम विश्व युद्ध शुरू हो गया। इस समय अंग्रेज सरकार ने पंजाब के जवानों को भर्ती कर विदेशों में अपने हक के लिए लड़ने भेज दिया। यहां बहुत-से जवान गुमनाम शहीदियां पा गए। बहुत-से विदेशों में ही अपने रिश्तेदारों से दूर बस गए। बहुत-से पंजाबियों ने अंग्रेजों के घरों में नौकरियां की। इसी तरह बहुत-से पंजाबियों ने कनाडा, अमेरिका, सिंघापुर, हांगकांग जैसे देशों में छोटे-छोटे काम-धंधे शुरू कर लिए।

सिक्खों की बढ़त देखकर अंग्रेजों ने एक और काला कानून जारी कर दिया। ७ जनवरी, १९१४ ई के आर. सी. नंबर २६ के अनुसार-- "सरकार द्वारा जारी हुक्म के तहत इस तारीख़ से किसी भी ऐसे प्रवासी या एशियाई मूल के व्यक्ति को कनाडा में उतरने की आज्ञा नहीं होगी जिसके पास अपने २०० डालर न होंगे। यह नियम उस एशियाई देश के नागरिक या निवासी के लिए लागू नहीं होगा जिसके साथ कनाडा द्वारा विशेष संधि अथवा समझौता किया गया हो तथा जिसके साथ कनाडा को यह नियम लागू करने की मनाही हो।"

उन दिनों भारतीयों के पास २०० डालर होना बहुत बड़ी बात थी। बहुत कम लोग इस शर्त को पूरा कर सकते थे। इस हुक्म के अनुसार एक तरह से भारतीयों के कनाडा में प्रवेश करने पर पूर्ण रूप मे पाबंदी लग गई थी। बाबा गुरदित्त सिंघ के मन पर इस धक्केशाही का गहरा असर हुआ। उन्होंने हांगकांग में रहते कुछ भारतीयों से मिलकर सलाह की कि वे समुद्री जहाज़ किराए पर लेकर सिक्ख प्रवासियों को कनाडा लेकर जाएंगे ताकि वे वहां जाकर अच्छा जीवन गुज़ार सकें। कनाडा के निवासी भारतीयों ने इस कार्य के लिए उनको पूर्ण सहयोग देने का भरोसा दिया। अंतत: यह फैसला हो गया कि वे एक जहाज़ द्वारा यात्रियों को हांगकांग से वैनकुवर लेकर जाएंगे। यह जहाज़ रास्ते में शिंघाई, मनीला तथा योकोहामा बंदरगाह पर रुकेगा। बाबा गुरदित्त सिंघ ने इस कार्य के लिए 'श्री गुरु नानक स्टीमर कंपनी' कायम की। २१ फरवरी, १९१४ ई को सूचना देने के लिए इश्तिहार प्रकाशित किए गए जिनके अनुसार-- "कनाडा सरकार द्वारा ९ मई, १९१० ई को भारतीय प्रवासियों के बारे में लागू किए गए कानून से बहुत सारे भारतीयों को बहुत-सी मुश्किलों का सामना करना पड़ा है। अब हमने कनाडा के कानून की शर्तें पूरी करने का प्रबंध किया है जिसके तहत सवारियां सीधे भारत से ही बुक की जाएंगी तथा कनाडा उतरने पर यह दिखाया जाएगा कि हर प्रवासी के पास उसके २०० डालर हैं। हमें अभी उटावा से टेलीग्राम मिली है कि भावी प्रवासी सीधे भारत से बुकिंग करें तथा कनाडा में उतरने के समय अपने पास २०० डालर दिखाएं। हमने इन दोनों बातों का

ही प्रबंध कर लिया है।"

"१. सीधा जाने के लिए हमने जहाज़ किराए पर ले लिया है और मि. ए. डब्ल्यू किंग को कहा है कि वह इसका प्रबंध करे। यात्री सीधा वैनकुवर ले जाए जाएंगे और वहीं उतारे जाएंगे। यात्रा के लिए टिकट का मूल्य ३५० रुपए होगा। नैतिक संकोच तथा धार्मिक यात्री के लिए यह टिकट ५० रुपए होगी। जो यात्री खाने का प्रबंध खुद करेंगे उनसे खाने के पैसे नहीं लिए जाएंगे। जहाज़ के रवाना होने की सूचना पंजाबी तथा अन्य अख़बारों में दे दी जाएगी तथा गांव के मुखियों को अवगत करवाया जाएगा। कंपनी का मुख्य आफिस कलकत्ता (कोलकाता) में होगा तथा इसकी पूरे विश्व में शाखाएं होंगी। इस बार जहाज़ की रवानगी के बारे में सूचना अख़बार में नहीं दी जाएगी बल्कि कुछ गुरुद्वारों को टेलीग्राम द्वारा बताया जाएगा। अगर किसी ने इसके बारे में निम्न हस्ताक्षरकर्त्ता से अधिक जानकारी लेनी हो तो वो इस ठिकाने पर पत्राचार करे :

बाबा गुरदित्त सिंघ
डायरेक्टर, श्री गुरु नानक स्टीकर कंपनी
गुरुद्वारा हावड़ा कलकत्ता।
कलकत्ता २१ फरवरी, १९१४"

२४ मार्च, १९१४ ई. को शीनी किशन गो. सी. काईशर कंपनी से हांगकांग में 'कामागाटामारू' नामक जपानी समुद्री जहाज़ ६ महीने के लिए ११००० डालर प्रति महीना किराए पर ले लिया। बाबा गुरदित्त सिंघ ने पहले कलकत्ता से जहाज़ किराए पर लेकर सीधा कनाडा जाने की योजना बनायी थी। कुछ कारणों से उनकी योजना सफल न हो सकी तो उन्होंने हांगकांग से चलने का प्रोग्राम बनाया। कामागाटामारू जहाज़ कनाडा जाने के लिए तैयार हुआ। अंग्रेज सरकार द्वारा अनेक प्रकार की रुकावटें डाली गयीं। पहले ५०० यात्रियों ने जाना था परंतु हांगकांग की पुलिस ने बाबा गुरदित्त सिंघ को गिरफ्तार कर बिना किसी दोष के नज़रबंद कर दिया। विरोधी तत्वों ने पूरे ज़ोर-शोर से बाबा जी के विरुद्ध प्रचार शुरू कर दिया। कामागाटामारू के यात्रियों को डराया-धमकाया जाने लगा। बाबा गुरदित्त सिंघ के वकील द्वारा पैरवी करने पर उनको रिहा कर दिया गया। बाबा गुरदित्त सिंघ द्वारा सरकार के विरुद्ध अदालती केस करने की धमकी देने के कारण उन पर लगाई गई सभी पाबंदियां खत्म कर दी गईं साथ ही अंग्रेज सरकार को कनाडा में इस जहाज़ के आने की सूचना देकर सख़्त कार्यवाही करने की सलाह भेज दी गई।

४ अप्रैल, १९१४ ई. को ५:५५ बजे १६५ यात्रियों को लेकर कामागाटामारू जहाज़ हांगकांग से वैनकुवर को रवाना हो गया। बाबा गुरदित्त सिंघ का छोटी उम्र का पुत्र भी साथ था। ८ अप्रैल, १९१४ ई. को शाम ५:३० बजे जहाज शिंघाई पहुंच गया। यहां से इसमें १११ यात्री और सवार हो गए। १५ अप्रैल, १९१४ ई. को शाम ३:५३ बजे शिंघाई से माजी के लिए रवाना हो गया तथा १८ अप्रैल को सुबह ८:०० बजे माजी पहुंच गया। माजी में पहुंचकर जहाज़ का कप्तान काकीनो काम से बरखास्त हो गया तथा उसकी जगह पर कप्तान यामन ने काम संभाल लिया। मिआजी को जहाज़ का मुख्य अधिकारी बनाया गया। माजी से जहाज़ में ८६ यात्री और सवार हो गए। २९ अप्रैल, १९१४ ई. को सुबह ५:०८ बजे जहाज़ ने माजी से योहकामा के लिए रवानगी की। २ मई, १९१४ ई. को यह ८:२० बजे चीन की बंदरगाह योहकामा पहुंच गया। योहकामा से इसमें १४ यात्री और सवार हो गए। इस तरह जहाज में ३७६ मुसाफिर सवार थे जिनमें से केवल ३० गैर-सिक्ख थे।

३ मई, १९१४ ई. को जहाज सुबह ८:०५

बजे योहकामा से वैनकुवर के लिए रवाना हो गया। २१ मई, १९१४ ई को यह शाम ७:४२ बजे विलियम हैड कुराटीन स्टेशन पर रुका। २२ मई, १९१४ ई. को सुबह यह जहाज़ वैनकुवर पहुंच गया। वैनकुवर शहर से भाई बलवंत सिंघ ग्रंथी अपने साथियों सहित स्वागत के लिए पहुंचे हुए थे। यहां जहाज़ के कप्तान ने बाबा जी से कहा कि उनसे जहाज़ की रवानगी के पत्र खो गए हैं। बाबा जी ने उसके सामान में से ही पत्र ढूंढ दिए। पत्र दिखाने पर भी जहाज़ को किनारे न लगने दिया गया। २३ मई, १९१४ ई को सुबह २:५० बजे वैनकुवर में जहाज़ का लंगर डाला गया। मुसाफिरों में से केवल उनको ही उतरने दिया गया जो कनाडा की नागरिकता को सिद्ध कर सके, अन्य सभी मुसाफिर सख़्त पहरे तले रखे गए। मुसाफिरों द्वारा इमीग्रेशन के उच्चाधिकारी मैल्कम रीड के पास रोष प्रकट करने पर भी कोई असर नहीं हुआ। बाबा गुरदित्त सिंघ द्वारा यह दलील देने पर कि जहाज़ में कोला लादा है, बतौर व्यापारी इसको उतारकर बेचने का उनको कानूनी अधिकार है, इन बातों की किसी अधिकारी ने कोई परवाह न की। वैनकुवर में बसते सिक्खों के पास भी ख़बरें पहुंच गई थीं। उन्होंने इकट्ठा होकर एक कश्ती ऐलबाली बंदरगाह पर ले जाकर मुसाफिरों को उतारने की कोशिश की परंतु कामयाब न हो सके। युनाइटेड लीग तथा खालसा सोसायटी द्वारा सांझे तौर पर इस धक्केशाही के विरुद्ध केस लड़ने के लिए एक अंग्रेज वकील मि. बर्ड की सेवाएं भी हासिल की गईं। वकील बर्ड को भी इमीग्रेशन अधिकारियों ने बाबा गुरदित्त सिंघ से मिलने की आज्ञा न दी।

१ जून, १९१४ ई. को किराए पर जहाज़ देने वाले ने धमकी दे दी कि अगर आवास अधिकारियों ने जहाज़ को पानी में ही रखा तो उसके सवार भारतीय गड़बड़ कर सकते हैं।

२ जून, को बाबा गुरदित्त सिंघ का यूरोपियन वकील बर्ड कश्ती में सवार होकर जहाज़ के नज़दीक आ गया किंतु उसको आवास अधिकारियों ने मिलने न दिया। इस धक्केशाही के विरुद्ध उसने देश के प्रधानमंत्री को रोष-पत्र लिखा तो उसको बाबा गुरदित्त सिंघ से अलग-अलग कश्ती में सुरक्षित पहरे तले मिलने की आज्ञा दे दी।

४ जून, १९१४ ई को आवास अधिकारियों ने कश्ती में ही एक घंटे के लिए वकील को मिलने दिया। इस मुलाकात का कोई खास परिणाम न निकला। इमीग्रेशन अधिकारी इस मुलाकात से खफ़ा थे। इमीग्रेशन अधिकारी मि. मैल्काम्रीड ने वकील को समुद्र में फेंक देने की धमकी भी दी। यह ख़बर चहुं ओर फैल गई।

५ जून, १९१४ ई. को जहाज़ में राशन खत्म हो रहा था तो आवास अधिकारियों ने एक कश्ती में कुछ राशन भेजा परंतु बाबा गुरदित्त सिंघ ने राशन का भुगतान करने से इंकार कर दिया जिस कारण वे सारा सामान फिर वापस ले गए।

१० जून, १९१४ ई. को बाबा गुरदित्त सिंघ द्वारा जहाज़ के एजेंट साटो को वैनकुवर बंदरगाह से चिट्ठी लिखी गई :

"प्यारे मि. साटो,

मैं खैरियत से हूं और आपकी तंदरुस्ती की कामना करता हूं। सफर के बारे में मेरा ब्यान है कि मैं २३ मई, १९१४ ई. को वैनकुवर पहुंचा था और पहले दिन से मुझे और मेरे साथी यात्रियों को बंदरगाह पर खड़े जहाज़ में कैद करके रखा गया है। प्रवासियों के बारे में कानून, जो कि मेरे लिए बच्चों वाला खेल है, जिसके अदालत में मैं टुकड़े-टुकड़े कर सकता हूं, अगर इसलिए मुझे साहिल पर जाने दिया जाए। मुझे जहाज़ में दमनकारी ढंग से नज़रबंद करके रखा गया है और अनेकों कठिनाइयां हैं।

अब तक मेरे कानूनी सलाहकार एवं मेरे दोस्तों को मुझसे मिलने और बात नहीं करने दी। इस तरह न तो मैं अपना माल उतार सका हूं एवं न ही और माल लाद सका हूं। मेरे एवं दूसरे यात्रियों पर इतनी सख़्त नज़र रखी जा रही है कि अख़बारें भी जहाज़ में नहीं आने दी जाती। हमारी रिपोर्टें पहले आवास अधिकारियों को दी जाती हैं ताकि जो वो चाहें वही आगे भेजें। चाहे मैंने आवास अधिकारी को नोटिस दिया कि सवारियों को छोड़कर वे मुझे और जहाज़ को नहीं रोक सकते परंतु उन्होंने इसकी परवाह नहीं की।"

"आपका एजेंट मि. सी. गार्डन जोनसन बिल्कुल मेरे विरुद्ध चल रहा है। मुझे नहीं मालूम क्यूं ? हमारे यहां पहुंचने से पहले उसने अख़बारों में हमारे विरुद्ध कई लेख लिखे जो २३ मई, १९१४ ई. को विक्टोरिया बंदरगाह में प्रकाशित हुए। उसका हुक्म मानकर जहाज़ के कप्तान यानामातो ने हमारे विरुद्ध बहुत कुछ किया। उसका क्या कारण है, मुझे नहीं मालूम। हमारे पर निगरानी रख रहे पहरेदार से मुख्याधिकारी मियाजी ने यह जानने की बहुत कोशिश की कि कामागाटामारू पर भारतीयों ने चोखा व्यापार किया है तथा एक दिन में एक लाख डालर एवं सोना इकट्ठा किया है। वे यह रकम तट पर पहुंचने के उपरांत मेरे हवाले करना चाहते थे। उन्होंने रकम देने के लिए मेरे हस्ताक्षर करवाने के लिए वकील को बुलाया था परंतु कप्तान ने उसको जहाज़ पर नहीं आने दिया। इसके बारे में अख़बारों की कटिंगें इस पत्र के साथ संलग्न हैं।"

"आज सुबह १०:०० बजे कप्तान ने मुझे एक पत्र दिया जिसमें कहा गया था कि मैं किरायानामा, एक रहीम सिंघ नामक आदमी, जिसको मैं जानता नहीं, के नाम पर तबदील कर दूं, जिसके उपरांत वह किराया देगा। चाहे मुझे एक लाख डालर व सोने का नुकसान हुआ फिर भी मैंने किराए की रकम बिना किसी ढील के देने के लिए हां कर दी। मैंने अपने नुकसान के बारे में ज़ालिम सरकार को तारें दी परंतु उसने कोई कार्यवाही नहीं की। यहां मैं २२ तारों की नकलें भेज रहा हूं जो कि मैंने दी हैं। मैं एवं मेरी सवारियां ६ दिनों तक भूखी रहीं क्योंकि आवास अधिकारियों ने हम में से किसी को भी कहीं जाकर खाने-पीने की वस्तुएं लाने की आज्ञा नहीं दी। इसके बारे में आवास विभाग के विरुद्ध दोष बिल्कुल स्पष्ट हैं।"

"उन्होंने मेरी नज़रबंदी तथा यातनायों के बारे में मुझे कोई कारण नहीं बताया। उनका मंतव्य यह है कि मैं अगर तट पर गया तो वहीं रकम जमा करा दूंगा, नहीं तो कप्तान जहाज़ लेकर चला जाएगा। मैंने उनको पैसों की खातिर जहाज़ वापिस नहीं मोड़ने दिया भले ही मेरा बहुत ज्यादा नुकसान हुआ। मुझे नहीं मालूम कि और कितने दिन जहाज़ में कैदी बनकर रहना पड़ेगा परंतु मैं फैसला होने तक वापिस नहीं लौटूंगा।"

"अगर मैं बच गया तो अन्य बातें आपसे मिलकर करूंगा। कृप्या मेरी चिट्ठी अख़बार में प्रकाशित करा देना, क्योंकि मैं दुनिया की ताकतों को कनाडा सरकार द्वारा मुझे मेरे व्यापार में पहुंचाए नुकसान से अवगत कराना चाहता हूं। कोई भी देश ऐसा नहीं करता। अगर मेरा उपरोक्त बयान गलत है तो कनाडा सरकार मुझ पर मुकद्दमा चला सकती है।

आपसे मेलजोल की आशा करता हुआ,

गुरदित्त सिंघ,

किराएदार, एस. एस. कामागाटामारू,

वैनकुवर वी. सी.।"

क्रमशः . . .

गुरु साहिबान का मानवतावाद और आधुनिक संदर्भ में उसकी सार्थकता

*-डॉ. जयभगवान गोयल**

हम आज बड़ी विकट परिस्थितियों से गुज़र रहे हैं। संकुचित राजनैतिक स्वार्थ, पद-लोलुपता, आतंकवाद, हिंसा, घोर भ्रष्टाचार, अनुशासनहीनता, जातिवाद, सामाजिक असमानता, आर्थिक विषमता इत्यादि हमारी राष्ट्रीय एकता एवं अखंडता के लिए खतरा बने हुए हैं।

अनास्था और अविश्वास, तृष्णा और लोभ, चरित्रहीनता और चरित्रहनन, असामाजिकता और अनैतिकता, मिथ्यात्व और अहंकार, भ्रष्टाचार और बेईमानी, मूल्यहीनता और छोटापन हमारे जीवन के अभिन्न अंग बनते जा रहे हैं। मानवीय मूल्यों का विघटन हो रहा है और अमानवीयता पनप रही है। मनुष्य अपना मनुष्यत्व खोता जा रहा है। धर्म, संप्रदाय, जाति आदि के आधार पर मनुष्य और मनुष्य के बीच की दूरियां गहराती जा रही हैं। अपनेपन के स्थान पर परायापन और सद्भाव के स्थान पर अजनबीपन बढ़ रहा है।

मनुष्य को उसकी इस दयनीय स्थिति से ऊपर उठाकर मानवीय प्रेम, समता, सहयोग, स्वतंत्रता एवं मानव-कल्याण के धरातल पर मानवतावाद को प्रतिष्ठित करने की आवश्यकता है।

सिक्ख गुरु साहिबान के समय में भी देश की स्थिति बड़ी शोचनीय थी। उन्होंने मध्य युग की राजनीतिक अशांति, धार्मिक मिथ्याचार, सामंती उत्पीड़न, सामाजिक एवं नैतिक अध:पतन, सांस्कृतिक एवं मानवीय मूल्यों के ह्रास का विशुद्धता और तीक्ष्णता से वर्णन किया है और अपने आचरण व उपदेशों से सभी स्तरों पर अमानवीय तत्त्वों का निराकरण करके उदात्त मानवीय मूल्यों की स्थापना की है।

गुरु साहिबान की बाणी में मानव-एकता, मानव-प्रेम, मानवीय एकता, मानवीय प्रेम, मानवीय समानता, मानव-स्वतंत्रता, मानव-मंगल, मानवीय मनोवेगों के उन्नयन, मानवीय सद्वृत्तियों के उन्मेश, मानव-सेवा, सामाजिक समरसता, सदाचार, करुणा, दया, सहयोग, सद्भाव, उदारता, परोपकार, संतोष, मैत्री, बंधुत्व आदि उदात्त मानवतावादी मूल्य इतनी प्रचुरता से विद्यमान हैं कि वे हमारी आज की ज्वलंत समस्याओं के लिए सक्षम समाधान प्रस्तुत करते हैं।

मध्ययुगीन विकृतियों एवं अमानवीय आचरण पर प्रकाश डालते हुए श्री गुरु नानक देव जी कहते हैं कि "सत्य का अंत हो गया है, झूठ का चारों ओर विस्तार है। लोभ राजा है और पाप उसका मंत्री। झूठ सेनापति और काम नायक है। प्रजा अंधी और ज्ञानविहीन है। वह मुर्दों की तरह कर भर रही है। शासकगण कसाई बन गए हैं। बेरहमी की छुरी उनके हाथ में है। धर्म पंख लगाकर उड़ गया है। चारों ओर झूठ की काली अमावस छाई हुई है। उसमें सच्चाई का चंद्रमा कहीं दिखाई नहीं देता।"

--सचि कालु कूड़ु वरतिआ कलि कालख बेताल ॥ . . .
लबु पापु दुइ राजा महता कूड़ु होआ सिकदारु ॥
कामु नेबु सदि पुछीऐ बहि बहि करे बीचारु ॥
अंधी रयति गिआन विहूणी भाहि भरे मुरदारु ॥
(पन्ना ४६८)

--कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ ॥
कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ ॥ *(पन्ना १४५)*

भाई गुरदास जी भी इस बात की प्रोढ़ता करते हैं कि राजे पाप कमा रहे हैं। रक्षक भक्षक हो गया हैं। बाड़ उलटी खेत को खा रही है। प्रजा अंधी और मूर्ख है तथा झूठ बोलती है। न्यायाधीश घूसखोर हो गए हैं। सभी स्त्री-पुरुष किसी तरह भी धन प्राप्त करने में लगे हैं। सारे संसार में पाप ही पाप फैल रहा है :

--कलि आई कुते मुही खाजु होआ मुरदार गुसाई।
राजे पापु कमांवदे उलटी वाड़ खेत कउ खाई।
परजा अंधी गियान बिनु कूड़ कुसतु मुखहु आलाई। . . .
काजी होए रिशवती बढी लै के हकु गवाई।
इसत्री पुरखै दामि हितु भावै आइ किथाऊं जाई।
वरतिआ पापु सभसि जगि मांही ॥ (वार १: ३०)

श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने भी अपने युग की पतित धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक एवं नैतिक दशा का चित्रण विशदता से किया है कि चारों ओर पाप समूह फैल गए हैं। धर्म पंख लगाकर उड़ गया है। हिंदू हो अथवा मुसलमान, सभी अपने-अपने धर्म से च्युत हो गए हैं। पृथ्वी पर अधर्म का बोझ बढ़ गया है। एक धर्म पर तो कोई चलता ही नहीं। जगह-जगह नए-नए मतों का प्रचलन हो गया है। शुभ कर्मों का लोप हो गया है। अब पाप ही सिरमौर है :

हिंदू कोई न तुरका रहि हैं ॥
भिंन भिंन घरि घरि मत गहि हैं ॥ . . .
भाराक्रित धरा सब हुइ है ॥
धरम धरम पर चलै न कुइ है ॥
घरि घरि अउर अउर मत होई ॥
एक धरम पर चलै न कोई ॥८॥ . . .
ठउर ठउर नव मत चले उठा धरम को दौर ॥
सुक्रित जह तह दुर रही पाप भइओ सिरमौर ॥७८॥ . . .
पाप प्रचुर जह तह जगि भइओ पंखन धार धरम उडि गइओ ॥१२०॥ (दसम ग्रंथ)

कोई पुण्य कर्म भी नहीं करता। सभी फोकट कर्मों में लीन हैं :

किस हूं न कउडी पुंनि ते कबहूं नहीं जसु लेहिंगे ॥२०॥ . . .
फोकटं धरम सबै कलि केवलं प्रभनं बिना ॥२१॥ (दसम ग्रंथ)

राजा अधर्मी और पापी हो गए हैं। उन्होंने धर्म को देश से निकाल दिया है। समर्थ नित्य दूसरों पर अनर्थ करते हैं। सर्वत्र पाप का राज्य है। साधु संत्रस्त हैं। मूर्ख सियाने बने हुए हैं। निरक्षर बुद्धिमान् हैं। क्या राजा, क्या प्रजा, नारी-नर, राव-रंक सभी दुष्कर्म एवं पाप-कर्म कर रहे हैं और धर्म की हानि कर रहे हैं :

अधरम राजता लाई ॥
निकारि धरम देस दी ॥४९॥ . . .
नितप्रति अनरथ ॥ कर है समरथ ॥९८॥ . . .
न्रिप देस देस विदेस जह तह पाप करम सबै लगै ॥ . . .
पाप प्रचुर राजा भए भई धरम की हानि ॥११६॥ . . .
राजा प्रजा सबै लगे जह तह करन कुकरम ॥१३५॥ . . .
ऊच नीच राजा प्रजा क्रिआ अधरम की लीन ॥
क्रिआ पाप की लीन नारि नर रंक अरु राजा ॥ . . . ॥१३६॥ (दसम ग्रंथ)

चारों ओर अराजकता एवं अनुशासनहीनता फैली हुई है। कोई एक दूसरे की बात नहीं मानता। कोई एक दूसरे का आदर-सत्कार नहीं करता। सब अपनी-अपनी डफली बजा रहे हैं :

--एक एक के पंथ न चलि है ॥
एक एक की बात उथलि है ॥७॥
--ऐंड बैंड फिरैं सबै सिर एक न नयाइ है ॥ (दसम ग्रंथ)

गुरु साहिबान के युग के राजनीतिक

अनाचारों का वर्णन करते हुए महाकवि भाई संतोख सिंघ ने यवनों-मलेच्छों के शासन तथा उनके अत्याचारों का भी स्पष्ट उल्लेख किया है। उनका कथन है कि घोर पाप प्रकट हो गए हैं, उत्पात हो रहे हैं, मलेच्छों का राज्य स्थापित हो गया है, शासक मंद बुद्धि और मलीन हैं। ऐसा लगता है कि शुभ कर्मों को किसी ने छीन लिया है। मंत्री लोभी और वेश्यागामी हैं। वे मन और वाणी से भी दुराचार करते हैं। राजा किसी की पुकार नहीं सुनता। न्यायाधीश घूसखोर हैं। वे झूठ को सच कर देते हैं, सत्य और न्याय का नाम नहीं लेते, जैसे बाड़ खेत को खाने लगे। उसी प्रकार शासक वर्ग प्रजा का हनन और शोषण कर रहा है :

कलिजुग पाइ अकाल प्रजोरा।
प्रगट भए अघ ओघ प्रघोरा।
आदि दुकाल होति उतपाता।
भयो मलेछ राज बखयाता ॥४॥ . . .
त्रिपत भए मतिमंद मलीना।
जनु शुभ करम खोस किस लीना।
मंत्री लोलप बेसयागामी।
दुराचार करिहीं मन बामी ॥६॥ . . .
त्रिपत पुकार न सुनिहैं काई।
काजी रिशवत बसि अधिकाई।
झूठे को साचा करि देई।
सति नयाउं को नाउं न लेई ॥८॥ . . .
हुती बार रखबार त्रिपला।
प्रजा खेत को खाति कुढाला ॥१४॥

(श्री गुर नानक प्रकाश, पूरबारध-१;३)

गुरु साहिबान के युग की धार्मिक अवस्था का निरूपण करते हुए भाई संतोख सिंघ ने लिखा है कि जगत में अनेक मतों का विस्तार हो गया है। नए-नए असंख्य मत स्थापित हो गए हैं। कोई परमेश्वर को नहीं पहचानता, न ही नाम-सिमरन करता है। और ही तरह का उपदेश देते हैं। योगियों ने बारह मार्ग (धूने) स्थापित कर लिए हैं। विरक्त भक्ति-विहीन हैं और शास्त्रों एवं ब्राह्मणों की निंदा करते हैं। जो सिर मुंडवा कर सन्यासी बन जाते हैं, उनका मन धन और काम में उलझ रहता है। वैरागी कहलाने वाले गृहस्थियों के मुकाबले अधिक तृष्णा में जलते हैं। लिंगायत, दिगंबर आदि साधु परस्पर झगड़ते रहते हैं; षड्दर्शन के ज्ञान और हरि की भक्ति के बिना व्यर्थ में ख्वार होते रहते हैं :

--प्रथम चरन कलिकाल बिसाला।
जहिं तहिं लागे करनि कुचाला।
मत बिसरते अनेक कुढाले।
नहिं सिमरहि सतिनाम सुखाले ॥
केतिक मल गिनीए जग भए।
तनक सिद्धि लहि पंथ चलए।
परमेशुर को नहि पहिचानै।
अपर विधिनि उपदेश बखाने ॥

(श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ)

--कीने द्वादश मारग जोगी।
भाउ भगति बिन भए बिओगी।
करहिं शासत्रन बिपर कुबादा।
बहुत परसपर वधति बिखाधा ॥१२॥
मूंड मुंडावहि हुइं सनिआसी।
दरब नार महिं रिदा दुरासी।
भए अतीत कहाइं बैरागी।
ग्रिसती ते वधि मन दौं लागी ॥१३॥
--जंगम बहुत सरेवरे करति दिगंबर रार।
खट दरशन हरिनाम बिन होति बाद मरि ख्वार ॥११॥

(श्री गुर नानक प्रकाश, पूरबारध-१;३)

सामान्य जनसमूह की अनैतिकता पर प्रकाश डालते हुए महाकवि कहते हैं कि लोगों ने अपना-अपना धर्म नष्ट कर लिया है। उनका शरीर पुण्यहीन और पापमय है। दीन-दुखियों से भी वे धन छीन लेते हैं। दूसरों के कार्य में अहित करते हैं। सन के समान दूसरों को दुख देते हैं। दूसरों के धन, रूप एवं पर-निंदा में उनका मन सदा लगा रहता है :

निज निज धरम नरन सभि नाखा।
पुंन हीन तन पापन पीना।
दरब खसोटहिं देखति दीना ॥९॥
पर कारज के करता हानी।
सनि जिउं तनु खोवहि दुख दानी।
पर-धन पर-निंदिआ पर-दारा।
निसदिन तन मन सो हित धारा ॥१०॥
(श्री गुर नानक प्रकाश, पूरबारध-१;३)

वस्तुतः ये ऐसे अमानवीय कृत्य हैं जिनमें राजा, शासक, सामंत, मंत्री, सेनापति, न्यायाधीश, धर्म-गुरु, सन्यासी, वैरागी और सामान्य-जन सभी ग्रसित हैं। इनके ये घृणित कृत्य मानव- विरोधी, मानव-अहितकारी हैं। गुरु साहिबान इनका परिहार करके मानव-मंगलकारी समाज की स्थापना करना चाहते थे। उन्होंने इस विनाशकारी अमानवीय कुप्रवृत्तियों को समाप्त करके मानवीय सद्वृत्तियों के प्रवर्तन का सशक्त प्रयास किया।

श्री गुरु नानक देव जी ने उस युग की अराजकतापूर्ण राजनीतिक व्यवस्था तथा यवन आक्रमणकारियों के आतंक, अत्याचारों और दमन के विरुद्ध अपना गहरा दुख और असंतोष प्रकट किया तथा निर्बल, असमर्थ, उत्पीड़ित व असहाय भारतीयों की दयनीय स्थिति हर गहरी चिंता व्यक्त की। उस युग के निर्दयी, निरंकुश, नृशंस शासकों को सिंह, कुत्तों, कसाइयों आदि के समान बताकर उनके क्रूर कृत्यों की भर्त्सना की और निरीह जनता पर हो रहे अत्याचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाई। उन्होंने कहा कि राजे सिंह के समान हिंसक हैं और उनके सामंत कुत्तों के समान लालची हैं, जो निरीह जनता को बिना किसी कारण प्रताड़ित कर रहे हैं। उनके नौकर अपने पैरों के नाखूनों से लोगों को ज़ख्मी कर रहे हैं और उनका खून कुत्तों की तरह चाट रहे हैं :

राजे सीह मुकदम कुते ॥
जाइ जगाइनि् बैठे सुते।
चाकर नहदा पाइनि् घाउ ॥
रतु पितु कुतिहो चटि जाहु ॥ (पन्ना १२८८)

यहां उन्होंने क्रूर शासकों की अमानवीयता की भर्त्सना ही नहीं की, वरन् यह चेतावनी भी दी है कि उनकी नृशंसतापूर्ण प्रवृत्ति और दुष्कर्मों की परख होने पर उनकी नाक काट दी जाएगी :

जिथै जीआं होसी सार ॥
नकीं वढी लाइतबार ॥ (पन्ना १२८८)

श्री गुरु नानक देव जी का उनके प्रति यह आक्रोश उनकी मानवतावादी संवेदना का ही परिचायक है।

मध्य युग में जब अधिकांश राजाओं और सामंतों के लिए देश-भक्ति अपने राज्य की सीमाओं तक ही सीमित थी, श्री गुरु नानक देव जी संभवतः पहले और अकेले युगपुरुष थे जिन्होंने बाबर के आक्रमण के प्रसंग में सम्पूर्ण हिंदोस्तान के आत्म-सम्मान, आत्म-गौरव और अस्मिता की बात की और आघातों से पीड़ित महसूस किया, उस पर अपना दुख प्रकट किया। इस संदर्भ में 'हिंदोस्तान' शब्द का प्रयोग भी संभवतः सर्वप्रथम उन्होंने ही किया जो बृहत्तर परिप्रेक्ष्य में उनकी राष्ट्रीय एवं मानवतावादी चेतना को व्यंजित करता है।

यहीं उन्होंने शक्तिशाली आक्रांताओं के अत्याचारों की अमानुषिक कुवृत्तियों के प्रति भी अपना क्षोभ प्रकट किया। उन्होंने कहा कि यदि एक शक्तिशाली दूसरे शक्तिशाली को मारे, तो मन में रोष नहीं होता, किन्तु यदि शक्तिशाली सिंह निरपराध निरीह पशुओं के झुंड पर आक्रमण करे तो उसके स्वामी को कुछ तो पुरुषार्थ दिखाना ही चाहिए :

जे सकता सकते कउ मारे ता मनि रोसु न होई ॥१॥रहाउ॥
सकता सीहु मारे पै वगै खसमै सा पुरसाई ॥
(पन्ना ३६०)

मानवीय स्वतंत्रता, धार्मिक स्वच्छंदता एवं मानवीय अधिकारों के लिए श्री गुरु अरजन देव जी को अनेक यातनाएं सहनी पड़ी। इन्हीं मानवीय मूल्यों की रक्षा करते हुए वे राजनीतिक अत्याचारों एवं धार्मिक कट्टरता का शिकार हुए।

श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने भी मानवीय स्वतंत्रता की रक्षा हेतु अपना महान बलिदान दिया तथा भयभीत, संत्रस्त, निर्बल और असहाय भारतीयों में अदम्य साहस एवं निर्भयता पैदा करने के लिए यह उद्घोषणा की थी कि सच्चा ज्ञानी वही है जो न किसी को भय दिखाता है और न किसी का भय मानता है :

भै काहू कउ देत नहि नहि भै मानत आन ॥
कहु नानक सुनि रे मना गिआनी ताहि बखानि ॥
(पन्ना १४२७)

मानव-स्वतंत्रता, मानव की गरिमा और मानव-कल्याण का यह महान् आदर्श है, कि न किसी से डरो न किसी को डराओ। हिंसा, आतंक, अत्याचार, अन्याय तभी होता है जब कोई किसी को डराने, धमकाने, दबाने का प्रयास करता है और इसी से अमानवीयता पनपती है। स्वतंत्रता, स्वाभिमान, आत्म-सम्मान-पूर्वक निर्भय होकर जीना भी एक उच्च मानवीय आदर्श है, इसलिए किसी से भयभीत न होकर अपने आदर्शों और मूल्यों पर दृढ़ रहना मानवतावादी दृष्टि का ही परिचायक है। श्री गुरु तेग बहादर साहिब ने इन्हीं मानवतावादी मूल्यों की रक्षा के लिए अपना **'शीश'** दे दिया लेकिन अपना **'सिरर'** (दृढ़ता) नहीं छोड़ा। अपना बलिदान दे दिया लेकिन अपने मूल्य नहीं छोड़े और इसलिए वे सृष्टि की चादर बन गए :

प्रगट भए गुरू तेग बहादर।
सगल स्रिसटि पै ढापी चादर ॥४॥

इस प्रकार गुरु साहिबान मानवतावादी मूल्य-चेतना के संरक्षक बन गए। मानवीय स्वतंत्रता की रक्षार्थ गुरु साहिबान का यह त्याग और बलिदान अद्वितीय है।

उस युग के आक्रमणकारी यवन शासक अत्याचार, अधर्म और अन्याय के प्रतीक थे, इसलिए उन्हें मलेच्छ व असुर भी कहा गया है। आतंक, दमन और अनाचार करने वाले इन मलेच्छों का विनाश करने के लिए, संतों का उद्धार, सत्य और न्याय की रक्षा, दीनों, असहायों, निर्बलों की प्रतिपालना और शुभ कर्मों के प्रवर्तन के लिए श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी को खड़ग धारण करनी पड़ी। वे इन आसुरी-अमानवीय शक्तियों के विरुद्ध आजीवन जूझते रहे और इसके लिए उन्होंने अपने सुपुत्रों तक को न्यौछावर कर दिया। अमानवीयता के विनाश और मानवतावादी आदर्शों की स्थापना में समर्थ खड़ग की वंदना करते हुए वे फरमान करते हैं :

खग खंड बिहंडं खलदल खंडं अति रण मंडं बरबंडं ॥
भुल दंड अखंडं तेज प्रचंडं जोति अमंडं भानु प्रभं ॥
सुख संतां करणं दुरमति दरणं किलबिख हरणं असि सरणं ॥
जै जै जग कारण स्रिसटि उबारण मम प्रतिपारण जै तेगं ॥ *(बचित्र नाटक, १:२)*

वह खडग जो संतों को सुखी करने वाली, दुष्टों का मरदन करने वाली, पापों का नाश करने वाली है, जगत की कारक, सृष्टि की पालक है अर्थात् वह खड्ग जो मानवतावाद की स्थापना करती है, वंदनीय है। अकाल पुरख से वे सदा यही वरदान मांगते हैं कि कितनी ही विकट स्थिति क्यों न हो वे शुभ कर्मों से कभी विचलित न हों :

देहि सिवा बरु मोहि इहै सुभ करमन ते कबहूं न टरों ॥ *(चंडी चरित्र)*

क्रमशः . . .

शहादत का जुनून

-डॉ. अमृत कौर*

बाबा बंदा सिंघ बहादर को जंज़ीरों में जकड़कर, पिंजरे में कैद कर दिल्ली ले जाया जा रहा था। उनके साथ सात सौ कैदी और भी थे, जिन्हें अलग-अलग पोशाकें पहनाकर जंज़ीरों से जकड़कर, ऊँटों पर बिठा कर बाबा जी के साथ ले जाया जा रहा था। तमाशबीनों की भीड़ उमड़ आई थी। लोगों में भय और आतंक उत्पन्न करने के लिए कुछ शहीद सिक्खों के सिर नेजों पर टांगे हुए थे। मुगल सैनिकों से घिरा यह जलूस आगे बढ़ रहा था। दिल्ली पहुंचकर इन कैदी सिक्खों की शहादत का सिलसिला शुरू हुआ। प्रतिदिन सौ सिक्खों को बेदर्दी से शहीद कर दिया जाता। जनता में दहशत फैलाने के लिए सिक्खों के कटे हुए सिरों को शहर की दीवारों और वृक्षों पर टांग दिया जाता। धड़ों के टुकड़े-टुकड़े कर पशु-पक्षियों के सम्मुख खाने के लिए फेंक दिए जाते। एक भी सिक्ख ने हार नहीं मानी, न कोई विचलित हुआ और न ही डगमगाया। चारों ओर भय और आतंक का साया था। हाहाकार मची हुई थी। दर्दमंद दिल रो रहे थे। जुल्म और अत्याचार के विरुद्ध आवाज़ उठाने का किसी में साहस नहीं था।

इन सिक्ख कैदियों में एक पंद्रह-सोलह वर्ष का नवयुवक बालक भी था जो अपनी विधवा मां का इकलौता बेटा था। उसकी मां को जब पता चला कि उसका बेटा भी इन सिक्ख कैदियों में है तो वह रोती-बिलखती फरियाद लेकर ज़ालिम हकूमत के दरबार में पहुंची। उसने वज़ीरों एवं सिपाहियों से गुहार लगाई कि "मेरा बेटा सिक्ख नहीं है। इसे आपने गलती से पकड़ लिया है। कृप्या इसे छोड़ दीजिए।"

उस बालक ने तपाक से उत्तर दिया कि "मैं सच्चा सिक्ख हूं। मेरी मां झूठ बोल रही है। यदि मेरी मां मुझे बचाने की खातिर मुझे सिक्ख नहीं मानती तो मैं इसे मां मानने से इंकार करता हूं।"

उसकी मां ने रो-रोकर उसे मनाने का प्रयास किया परंतु वह टस से मस नहीं हुआ और यही बात बार-बार दोहराता रहा कि "यह स्त्री मेरी मां नहीं है। यह झूठ बोल रही है। मुझे भी शहीद कर दो। मैं सिक्खी स्वरूप में, अपने धर्म की रक्षार्थ शहीद हो जाना चाहता हूं। देश-धर्म के लिए शहीद होने का शुभ अवसर तो किसी भाग्यशाली को ही प्राप्त होता है।" मुगल सिपाहियों ने उस बालक का सिक्खी के प्रति लगाव एवं उसकी ज़िंदादिली देखकर उसे शहीद करने का मन बना लिया। देखते ही देखते उसका सिर धड़ से अलग कर दिया गया। उस बालक के प्राणरहित मुख पर असीम शांति और सुकून का एहसास था। उसने प्राण हथेली पर रखकर गुरु-घर में प्रवेश किया था। वो शहादत के अनमोल तोहफे को पाकर इस संसार को अलविदा कहकर सदा-सदा के लिए अमर हो गया था। ❁

*१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, जीरकपुर-१४०६०४ (पंजाब), मो. :९८१५१-०९९५७

गुरबाणी चिंतनधारा : ८२

सुखमनी साहिब : विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

सत्रहवीं असटपदी

सलोकु ॥
आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भि सचु नानक होसी भि सचु ॥१॥
(पन्ना २८५)

१७वीं असटपदी के सलोक में गुरु पंचम पातशाह जी ने परम पिता परमेश्वर के सदीवी सत्य स्वरूप को अभिव्यक्त किया है। श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि परमेश्वर प्रारंभ से ही सत्य स्वरूप था, चार युगों के प्रारंभ समय में भी सत्य था, वर्तमान में भी सत्य है। गुरु पातशाह फरमान करते हैं कि प्रभु आने वाले समय में भी सत्य ही होगा।

वस्तुत: पारब्रह्म परमेश्वर सदैव एक रूप अस्तित्व वाला होने के कारण सत्य है। जब युगों का प्रारंभ नहीं हुआ था अर्थात् दुनिया का कोई जीव या वस्तु अस्तित्व में नहीं आई थी तब भी परमेश्वर एक रस व्यापक था। जब संसार की रचना हुई तब भी वह सत्य रूप में विद्यमान था, वर्तमान में भी वह सत्य स्वरूप हस्ती वाला है, आने वाले समय में भी वह सत्य रूप में विद्यमान रहेगा। वह सदा स्थिर रहने वाला है।

असटपदी ॥
चरन सति सति परसनहार ॥
पूजा सति सति सेवदार ॥
दरसनु सति सति पेखनहार ॥
नामु सति सति धिआवनहार ॥
आपि सति सति सभ धारी ॥
आपे गुण आपे गुणकारी ॥
सबदु सति सति प्रभु बकता ॥
सुरति सति सति जसु सुनता ॥
बुझनहार कउ सति सभ होइ ॥
नानक सति सति प्रभु सोइ ॥१॥

१७वीं असटपदी की पहली पउड़ी में श्री गुरु अरजन देव जी ने परमेश्वर के सत्य स्वरूप के दर्शन करवाते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि परमेश्वर का दीदार करने वाले साधक अपनी सुरति को प्रभु-चरणों में टिकाकर सत्य स्वरूप वाले अर्थात् अटल (जन्म-मरण से रहित) हो जाते हैं। गुरु पातशाह पावन फरमान करते हैं कि परमेश्वर के चरण सदैव कायम रहने वाले हैं। उसके चरणों को छूने वाले भी अटल हो जाते हैं। परमेश्वर की पूजा (आराधना) सत्य स्वरूप है। उसकी आराधना करने वाले भी सत्य स्वरूप हो जाते हैं। प्रभु के दर्शन-दीदार सत्य हैं तथा दर्शन करने वाले भी सत्य ही हो जाते हैं। प्रभु का नाम सदा अटल है। उसके नाम का सिमरन करने वाले भी अटल हो जाते हैं। परमेश्वर सत्य है तथा उसकी रचना का अस्तित्व भी सत्य है। प्रभु खुद गुणों का भंडार है तथा खुद ही गुण पैदा करने वाला है। परमेश्वर का (प्रशंसा रूप) शब्द सत्य है और उसका उच्चारण करने वाला भी सत्य हो जाता है। प्रभु में सुरति जोड़ना सत्य है तथा सत्य स्वरूप ईश्वर की कीर्ति सुनने वाला भी सत्य है। परमेश्वर की सर्वव्यापकता का एहसास

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४, मो: ९९२९७-६२५२३*

करने वालों को उसका बनाया यह संसार भी हस्ती वाला अर्थात् सत्य दिखाई देता है। पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि अकाल पुरख सदैव कायम रहने वाला है।

उपरोक्त असटपदी में गुरु पातशाह जी ने परमात्मा-जीवात्मा के अंश-अंशी स्वरूप की व्याख्या की है। परमेश्वर अथाह सागर स्वरूप है। आत्मा उसमें निर्मित बूंद है। शब्द को चिंतकों ने उस सागर में उठी लहर माना है। जब यह मन अहंकारग्रस्त होकर अपना अस्तित्व अलग करने की चेष्टा करता है तो इसकी उस पानी की बूंद की तरह, जो सागर से अलग होते ही पल भर में मिट जाती है, हस्ती का कोई अस्तित्व नहीं रह जाता है। इसके विपरीत उस अथाह सागर परमेश्वर में मिलकर मन उसी का रूप हो जाता है। चौथे पातशाह श्री गुरु रामदास जी की पावन बाणी में भी परमेश्वर की सर्वव्यापकता के दीदार होते हैं कि किस प्रकार वह स्वयं ही शब्द है, सुरति है और अनहद नाद भी है :

हरि आपे सबदु सुरति धुनि आपे ॥
हरि आपे वेखै विगसै आपे ॥
हरि आपि जपाइ आपे हरि जापे ॥ (पन्ना १६५)

गुरबाणी आशयानुसार यदि जीव-स्त्री शब्द-गुरु में अपनी सुरति को लीन रखे तो वह सदैव परमेश्वर का मिलाप हासिल कर सौभाग्यशाली बनी रहती है :

सबदि रती मनु वेधिआ हउ सद बलिहारै जाउ ॥ . . .
नित रवै सोहागणी साची नदरि रजाइ ॥
(पन्ना ५४)

--सति सरूपु रिदै जिनि मानिआ ॥
करन करावन तिनि मूलु पछानिआ ॥
जा कै रिदै बिस्वासु प्रभ आइआ ॥
ततु गिआनु तिसु मनि प्रगटाइआ ॥
भै ते निरभउ होइ बसाना ॥
जिस ते उपजिआ तिसु माहि समाना ॥
बसतु माहि ले बसतु गडाई ॥
ता कउ भिंन न कहना जाई ॥
बूझै बूझनहारु बिबेक ॥
नाराइन मिले नानक एक ॥२॥

१७वीं असटपदी की दूसरी पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह जी ने परमेश्वर के चरणों में हृदय को टिकाकर रखने वाले भक्त-जनों की आत्मिक उच्चावस्था का ज़िक्र करते हुए, उन्हें प्रभु-चरणों में अभेद बताते हुए उनकी परमात्मा में एकरूप हो जाने वाली सर्वोत्तम अवस्था का वर्णन किया है।

श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि जिस जीव ने सत्य स्वरूप, सदैव कायम रहने वाले परमेश्वर को हृदय में बसा लिया वास्तव में उसी ने सब कुछ करने एवं करवाने में समर्थ परमेश्वर के मूल स्वरूप को पहचान लिया है। जिसके हृदय में ईश्वर की सर्वव्यापकता एवं सर्वसमर्थता का यकीन दृढ़ हो गया है उसे (मानो) आत्मबोध अर्थात् सच्चा ज्ञान प्राप्त हो गया है। ऐसा व्यक्ति प्रत्येक सांसारिक भय से मुक्त होकर, निर्भय स्वरूप होकर विचरण करता है। ऐसा मनुष्य प्रभु में लीन होकर निवास करता है। जैसे एक वस्तु को लेकर उसे उसी किस्म की अन्य वस्तु में मिला दिया जाये तो फिर उसे उससे भिन्न नहीं किया जा सकता, ठीक वैसे ही यदि कोई व्यक्ति परमेश्वर के चरणों में लीन हो गया है तो उसे परमेश्वर से अलग नहीं किया जा सकता (क्योंकि जीवात्मा परमात्मा का ही स्वरूप है)। इस गूढ़ तथ्य (विचार) को समझने वाले कोई विरले ही हैं। पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि जो जीव परमेश्वर से मिल जाते हैं वे उसमें एक रूप हो जाते हैं।

उपरोक्त पउड़ी में उन विरले जीवों का वर्णन किया गया है जो प्रभु पर अटूट विश्वास रखते हैं; उसका दीदार कर उसी का रूप होकर उसी में समा जाते हैं। द्वैत एवं दुविधावश जीव भय का शिकार बने रहते हैं। केवल निर्भय स्वरूप परमेश्वर में एकाकार होकर ही भय-मुक्त होना संभव है। आत्मा का परमात्मा में अभेद हो जाना ही भय-मुक्त होना है। सागर से उठी लहर सागर का ही रूप होती है। उसका अलग अस्तित्व नहीं होता। ठीक उसी प्रकार किसी भी जाति, धर्म, कुल के मनुष्य की आत्मा पुन: जब परमात्मा में एक रूप हो जाती है तो वह परमात्मा ही कहलाती है। गुरबाणी में अन्यत्र भी उपरोक्त अवस्था का वर्णन दर्शनीय है :

जिउ जल महि जलु आइ खटाना ॥
तिउ जोती संगि जोति समाना ॥ (पन्ना २७८)
--ठाकुर का सेवकु आगिआकारी ॥
ठाकुर का सेवकु सदा पूजारी ॥
ठाकुर के सेवक कै मनि परतीति ॥
ठाकुर के सेवक की निरमल रीति ॥
ठाकुर कउ सेवकु जानै संगि ॥
प्रभ का सेवकु नाम कै रंगि ॥
सेवक कउ प्रभ पालनहारा ॥
सेवक की राखै निरंकारा ॥
सो सेवकु जिसु दइआ प्रभु धारै ॥
नानक सो सेवकु सासि सासि समारै ॥३॥

तीसरी पउड़ी में प्रभु के सेवक की निर्मल एवं पवित्र जीवन-शैली का वर्णन किया गया है कि किस प्रकार वह प्रभु की आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए श्वास-श्वास उसकी बंदगी करता है।

पंचम पातशाह पावन फरमान करते हैं कि प्रभु का सेवक (सदैव)उसके हुक्म में चलता है अर्थात् ठाकुर की आज्ञा मानने वाला होता है। वह सदा प्रभु की सेवा-भक्ति में ही लीन रहता है। परमेश्वर के सेवक का अपने प्रभु पर पूरा भरोसा होता है। मन के पूर्ण विश्वास के कारण वह कभी विचलित नहीं होता। प्रभु के सेवक की ज़िंदगी की मर्यादा निर्मल एवं पवित्र होती है। ऐसी मर्यादा वाला सेवक प्रभु को सदा अपने साथ जानता है। प्रभु हर पल उसके अंग-संग है ऐसा उसका विश्वास सदा बना रहता है। प्रभु का सेवक सदैव प्रभु के रंग में रंगा रहता है अर्थात् नाम-रंग में रंगा आनंद-विभोर रहता है। प्रभु अपने सेवक की सदा प्रतिपालना करता है। प्रभु अपने सेवक की हमेशा लाज रखता है। जिस पर प्रभु दया-दृष्टि करता है वही उसका सेवक बनने में समर्थ होता है। श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि ऐसा सेवक श्वास-श्वास प्रभु की बंदगी करता है अर्थात् दम-ब-दम उसका सिमरन करता है।

उपरोक्त पउड़ी में प्रभु के सेवक की महिमा का वर्णन किया गया है। गुरु साहिब ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि उसकी रहमत के बिना सेवक भक्ति की निर्मल मर्यादा को निभाने में समर्थ नहीं हो सकता। उसकी कृपा-दृष्टि से ही प्रभु-नाम-अभ्यास में लगा सेवक आजीवन प्रसन्नचित्त रहता है। यह तभी मुमकिन हो पाता है जब प्रभु की कृपा से वह उसके हुक्म को शिरोधार्य कर लेता है। प्रभु सदैव अपने सेवकों की प्रतिपालना करता है।

श्री गुरु नानक पातशाह जी ने जपु जी साहिब में हुक्म की मर्यादा को बहुत सुंदर ढंग से समझाया है। वहां भी यह तथ्य स्पष्ट किया गया है कि सारी सृष्टि प्रभु के हुक्म में ही कार्यरत है। जिन पर प्रभु की रहमत हो जाती है वे प्रभु-हुक्म की मर्यादा को अच्छी तरह समझ लेते हैं। तब उनके अंदर का कर्त्ता-भाव विनिष्ट हो जाता है और उनका जीवन धन्य हो जाता है :

हुकमै अंदरि सभु को बाहरि हुकम न कोइ ॥
नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ॥२॥
(पन्ना १)

--अपुने जन का परदा ढाकै ॥
अपने सेवक की सरपर राखै ॥
अपने दास कउ देइ वडाई ॥
अपने सेवक कउ नामु जपाई ॥
अपने सेवक की आपि पति राखै ॥
ता की गति मिति कोइ न लाखै ॥
प्रभ के सेवक कउ को न पहूचै ॥
प्रभ के सेवक ऊच ते ऊचे ॥
जो प्रभि अपनी सेवा लाइआ ॥
नानक सो सेवकु दह दिसि प्रगटाइआ ॥४॥

उपरोक्त पउड़ी में पंचम पातशाह सेवक की सर्वोच्चता का ज़िक्र करते हुए उसके विशिष्ट गुणों को उजागर करते हैं। पंचम पिता यह स्पष्ट कर देते हैं कि यह सब परमेश्वर की रहमत से मुमकिन हुआ है। अपने दास को बढ़प्पन देने का, अपने भक्त की लाज रखने का विलक्षण गुण अकाल पुरख में ही है।

श्री गुरु अरजन देव जी पावन फरमान करते हैं कि प्रभु अपने सेवक की लाज रखता है। प्रभु अपने सेवक की हर हाल में रक्षा करता है। प्रभु अपने सेवक को मान-सम्मान (बढ़प्पन) बख़्शता है। प्रभु अपने सेवक को आप (कृपा करके) नाम जपाता है, सिमरन-अभ्यासी बनाता है। अपने सेवक की इज्जत प्रभु आप ही रखता है। ऐसे सेवक की उच्चावस्था का अनुमान कोई नहीं लगा सकता। प्रभु-सेवक के तुल्य कोई दूसरा नहीं हो सकता अर्थात् कोई भी प्रभु के सेवक की बराबरी नहीं कर सकता। प्रभु का सेवक सर्वश्रेष्ठ होता है। पंचम पातशाह अंतिम पंक्ति में स्पष्ट करते हैं कि जिसे प्रभु अपनी सेवा-भक्ति में लगा लेते हैं उस सेवक को दसों दिशाओं में मान-सम्मान मिलता है अर्थात् वह सारे संसार में ख्याति प्राप्त करता है।

चौथी पउड़ी में गुरु पंचम पातशाह ने सेवक की महिमा के गान के साथ परमेश्वर के दयालु स्वभाव का वर्णन बाख़ूबी किया है। गुरबाणी में अन्यत्र भी इसी भाव के दर्शन होते हैं कि कैसे परिपूर्ण परमात्मा हर युग में अपने भक्तों-सेवकों की रक्षा करता आया है तथा उन्हें हर हाल में बढ़ाई बख़्शता है। वह उनसे स्वयं भक्ति करवाता है और उनके प्रत्येक कार्य में स्वयं मददगार होता है :

अपुने सेवक की आपे राखै आपे नामु जपावै ॥
जह जह काज किरति सेवक की तहा तहा उठि धावै ॥१॥
सेवक कउ निकटी होइ दिखावै ॥
जो जो कहै ठाकुर पहि सेवकु ततकाल होइ आवै ॥
(पन्ना ४०३)

गुरबाणी आशयानुसार परमेश्वर की महिमा अपरम्पार है तथा वह अपने सेवक की स्वयं रक्षा करता है :

अपने सेवक की आपे राखै प्रभ मेरे को वड परतापु ॥ (पन्ना ८२५)

सचमुच परमेश्वर दयालु है अपने सेवक की माता-पिता सदृश्य प्रतिपालना करने वाला है :

अपने सेवक कउ आप सहाई ॥
नित प्रतिपारै बाप जैसे माई ॥ (पन्ना २०२)

प्रभु अपने भक्तों की खुद रक्षा करता रहा है। गुरबाणी-प्रमाण है :

हरि जुगु जुगु भगत उपाइआ पैज रखदा आइआ राम राजे ॥
हरणाखसु दुसटु हरि मारिआ प्रहलादु तराइआ ॥
अहंकारीआ निंदका पिठि देइ नामदेउ मुखि लाइआ ॥
जन नानक ऐसा हरि सेविआ अंति लए छडाइआ ॥
(पन्ना ४५१)

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष साहिबान : २२

स. काबल सिंघ

*-स. रूप सिंघ**

पंजाबी, अंग्रेजी, फ़ारसी तथा उर्दू भाषाओं के ज्ञाता, सफल अध्यापक, किसान, धार्मिक-सामाजिक नेता, शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर के अध्यक्ष-पद पर विराजमान होने वाली हंसमुख शख़्सियत स. काबल सिंघ का जन्म २४ दिसंबर, १९२८ ई. को स. किशन सिंघ तथा माता अमर कौर के घर चक्क नं: २७५, झंग ब्रांच लायलपुर (पाकिस्तान) में हुआ। आरंभिक शिक्षा आप ने गांव के प्राइमरी स्कूल से प्राप्त कर दसवीं का इम्तिहान बार खालसा हाई स्कूल चक्क नं. ४१, तहसील व ज़िला लायलपुर से १९४३ ई. में पास किया। आपने एफ़. एस. ई. १९४६ ई. में खालसा कॉलेज लायलपुर से पास की तथा बी. ए. की डिग्री श्री गुरु गोबिंद सिंघ खालसा कॉलेज, माहिलपुर, होशियारपुर से प्राप्त की। देश-विभाजन के उपरांत सितंबर, १९४७ ई. में आप जी परिवार सहित गांव बहिबलपुर, तहसील गढ़शंकर, ज़िला होशियारपुर में बस गए। १९५९ ई. से आप जी गांव थीडा, नज़दीक माहलपुर में परिवार सहित रह रहे थे। आपका अनंद कारज १९५३ ई. में बीबी गुरमीत कौर के साथ हुआ। आपके घर तीन लड़के और एक लड़की पैदा हुई। लड़की कनाडा में तथा लड़के अमेरिका में अपने परिवारों सहित कारोबार करते हैं। आपका मुख्य व्यवसाय कृषि-कार्य था। आपने कुछ समय खालसा हाई स्कूल, शाम चौरासी तथा नडाला में अध्यापक के रूप में सेवा की। १९४६ ई. से आप सक्रिय सियासत में शामिल हो गए। विधान सभा चुनाव के समय आपने दरवेश सिक्ख सियासतदान ज्ञानी करतार सिंघ की डटकर मदद की। देश-विभाजन के समय १९४७ ई. में आपको और आपकी बहन को ज्ञानी करतार सिंघ ही लेकर आए थे। आप कॉलेज की पढ़ाई के समय सिक्ख स्टूडेंट्स फैडरेशन के समर्पित वर्कर रहे। १९४८-४९ ई. में जब डॉ. जसवंत सिंघ नेकी सिक्ख स्टूडेंट्स फैडरेशन के अध्यक्ष थे तो आप जी कार्यकारिणी के सदस्य थे।

मामा-भानजा वज़ारत के विरोध में १९४९ ई. में मोर्चा लगा तो आप ने जत्थे सहित गिरफ्तारी दी तथा १० महीने कपूरथला की जेल में कैद रहे। १९५३ ई. में गुरुद्वारा टाहली साहिब पातशाही छेवीं, होशियारपुर में पंजाबी सूबा मोर्चा तथा सिक्खों के खिलाफ हो रही कार्यवाही के विरुद्ध आपने जलसा किया। ज्ञानी फौजा सिंघ, कार्यकारी जत्थेदार, तख़्त श्री केसगढ़ साहिब और आपके विरुद्ध देशद्रोही तथा १२४ अल्फ (अ) के तहत केस बनाया गया। इस केस में आप दोनों को ३-३ वर्ष की सख़्त सज़ा सुनाई गई। ये दो शख़्सियतें थीं, जिनके इस केस की सफाई के गवाह ज्ञानी करतार सिंघ तथा स. हुकम सिंघ, भूतपूर्व स्पीकर पेश हुए थे। डिस्ट्रिक्ट अटार्नी ने ज्ञानी करतार सिंघ से पूछा कि क्या यह दोनों कौमों की थ्यूरी का परिणाम नहीं कि पाकिस्तान और भारत बने हैं? ज्ञानी जी ने जवाब दिया कि यह दोनों कौमों

**सचिव, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर-१४३००६; मो. ९८१४६-३७९७९*

की थ्यूरी का परिणाम नहीं था बल्कि बहुसंख्यक कौम द्वारा अल्पसंख्यक कौम के साथ किए गए व्यवहार के परिणामस्वरूप देश-विभाजन हुआ है। दो महीने के बाद आपको ज़मानत पर रिहा किया गया तथा १९५७ ई में आप इस केस में से बरी हो गए। इसी समय उत्तर प्रदेश हाई कोर्ट ने फैसला दिया कि देश का प्रत्येक नागरिक, जिस किस्म की चाहे सरकार मांग सकता है, उसके विरुद्ध देशद्रोह का केस दर्ज नहीं हो सकता। 'पंजाबी सूबा ज़िंदाबाद' नारे के मोर्चे के समय भी आप नज़रबंदी एक्ट के तहत पहले घर से गिरफ्तार किए गए तथा दफा-३ के तहत अंबाला जेल में बंद रहे और बाद में ट्रिब्यूनल ने बरी कर दिया। उस वक्त के सारे विधायकों सहित स. अजीत सिंघ सरहद्दी (एडवोकेट) तथा अन्य सारे व्यक्तियों को नज़रबंदी एक्ट के तहत अंबाला जेल में रखा गया। फिर केंद्रीय सरकार के साथ शिरोमणि अकाली दल का पंजाब को पंजाबी ज़ोन तथा हिंदी ज़ोन में बांटने का समझौता हो गया।

१९५७ ई में ज्ञानी करतार सिंघ टांडा क्षेत्र से चुनाव लड़कर विधायक बनने के उपरांत माल (राजस्व) मंत्री नियुक्त हो गए। उस समय आप उनके राजनीतिक सचिव बने। १९६१ ई में राजनीतिक सचिव की पदवी से त्यागपत्र दे दिया तथा ब्लाक समिति के अध्यक्ष चुने गए। १९६४ ई में आप दोबारा गढ़शंकर ब्लाक के अध्यक्ष चुने गए। १९६८ ई में पंजाब कौंसिल के ज़िला होशियारपुर से सदस्य चुने गए। इस समय के दौरान पंजाबी सूबा बनने के बाद १९६८ ई में पंजाब कौंसिल का चुनाव लड़कर ज़िला होशियारपुर से सदस्य चुने गए। १९७७-७८ ई में ज़िला होशियारपुर को-आप्रेटिव बैंक के मैनेजिंग डायरेक्टर बने।

शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के १९७९ ई में हुए आम चुनाव के समय स. काबल सिंघ क्षेत्र गढ़शंकर से सदस्य चुने गए। १९८४ ई में धर्म-युद्ध मोर्चे में आप स. परकाश सिंघ बादल के साथ श्री अमृतसर से गिरफ्तार होकर लुधियाना जेल में बंद रहे। कुछ समय बाद सबको जेल से रिहा कर दिया गया। बाद में आपको श्री दरबार साहिब पर हुए फौजी हमले के दौरान घर से गिरफ्तार करके जेल में रखा गया। फिर कई बार गिरफ्तार एवं रिहा होते रहे। १९८५ ई में आप शिरोमणि अकाली दल के ज़िला होशियारपुर के जत्थेदार बने। इससे पहले लंबा समय ज़िला महासचिव तथा उपाध्यक्ष भी रहे। जब स. (संत) हरचंद सिंघ लौंगोवाल शहीद हुए तब भी आप ज़िला होशियारपुर के अध्यक्ष तथा शिरोमणि अकाली दल की वर्किंग कमेटी के सदस्य थे।

सितंबर, १९८५ ई. में आप शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के वरिष्ठ उपाध्यक्ष बने। फरवरी, १९८६ ई. में जत्थेदार गुरचरन सिंघ 'टौहड़ा' के त्यागपत्र देने पर आप ३ मार्च, १९८६ ई. को शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के कार्यकारी अध्यक्ष बन गए। ६ मार्च, १९८६ ई. को कपूरथला में आप पर गोली चलायी गयी। दो गोलियां आपको लगीं फिर भी गुरु-कृपा से आप बच गए, परंतु स. रवेल सिंघ, मैनेजर, गुरुद्वारा शहीदां (माहिलपुर) शहीद हो गए। २२-२३ मार्च, १९८६ ई. को बजट सेशन के दौरान शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के कार्यकारी अध्यक्ष होने के नाते एजंडे में अध्यक्ष के चुनाव का प्रस्ताव रखा तथा बजट सेशन की मीटिंग के दौरान चाहे आप हाज़िर नहीं हो सके किंतु आपको सर्वसम्मति से शिरोमणि गु. प्र. कमेटी का अध्यक्ष चुन लिया गया। आप ३० नवंबर,

१९८६ ई. तक इस पद पर सुशोभित रहे।

आपकी अध्यक्षता का काल बहुत विकट था। पंजाब के हालात नाजुक होने के कारण सिक्ख संगत गुरु-घर, यहां तक कि श्री हरिमंदर साहिब में जाने से भी डरती थी। आप ने धर्मी फौजियों की टास्क फोर्स तैयार करवायी। स्थानीय गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटियों के चुनाव को काफी देर हो चुकी थी, इसलिए दफा-८७ की गुरुद्वारा कमेटियों को तोड़कर सीधा प्रबंध शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के पास लाया गया। गुरुद्वारों के नाम लगते दसवंध, धार्मिक तथा शैक्षणिक फंड शिरोमणि गु. प्र. कमेटी ने गुरुद्वारा साहिबान से इकट्ठा किए तथा शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की आर्थिक दशा का सुधार किया। आपके अध्यक्षता काल के समय मात्र तीन मुलाज़िम ही भर्ती किए गए। शिरोमणि गु. प्र. कमेटी की आर्थिक दशा ठीक कर इसे नयी दिशा प्रदान की गई। आपके कार्यकाल में किसी गुरुद्वारे में आतंकवादियों के साथ पुलिस का मुकाबला नहीं हुआ।

आप पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के बोर्ड ऑफ मैनेजमेंट के भी तीन वर्ष तक सदस्य रहे। १९६० ई से श्री गुरु गोबिंद सिंघ खालसा कॉलेज, माहिलपुर के महासचिव रहे तथा इस संस्था के मैनेजर के रूप में कार्यशील रहे। यह कॉलेज देश-विभाजन से पूर्व १९४६ ई. में स्थापित हुआ था। इस कॉलेज में इस समय सात पोस्ट-ग्रेजुएट विषयों की शिक्षा दी जाती है। आप गुरु नानक देव इंजीनियरिंग कॉलेज, लुधियाना के भी अध्यक्ष रहे। विद्या-प्रेमी होने के कारण आप जी ने क्षेत्र में विद्या के प्रसार हेतु संत हरी सिंघ कराहपुरी यादगारी बी. एड. कॉलेज आरंभ करवाया। आप जी को बाबा बंदा सिंघ बहादर इंजीनियरिंग कॉलेज, फ़तहिगढ़ साहिब के प्रथम ट्रस्टी होने का गौरव भी हासिल हुआ। आपने अनंदपुर साहिब तथा गढ़शंकर के बब्बर अकाली मेमोरियल खालसा कॉलेज के सचिव तथा अध्यक्ष के रूप में भी काफी समय सेवा की। आप अपने गांव के पंच, सरपंच, ब्लाक समिति के अध्यक्ष तथा ज़िला परिषद होशियारपुर के सदस्य भी रहे। आपने सारी ज़िंदगी शिरोमणि अकाली दल में गुज़ारी। आप ज़िला होशियारपुर के सबसे पुराने अकाली थे। आपने आपातकालीन के दौरान अकाली दल द्वारा लगाए प्रत्येक मोर्चे में जेल काटी।

आप १९९० ई से १९९५ ई तक शिरोमणि अकाली दल के अध्यक्ष भी रहे। पार्टी-अध्यक्ष होने के नाते शिरोमणि अकाली दल का चुनाव निशान 'तराजू', जो कि आपके अधिकार में ही था, आपने बादल तथा लौंगोवाल अकाली दलों के मिश्रण की प्रक्रिया में १९९७ ई. के चुनाव के समय स. परकाश सिंघ बादल को सौंप दिया। आपके कार्यकाल में ही कलर खालसा सीनियर सेकंडरी स्कूल, हरियाणा (होशियारपुर), बब्बर अकाली खालसा मेमोरियल कॉलेज, गढ़शंकर आदि शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के प्रबंध तले लाए गए। खालसा कॉलेज, गढ़दीवाला तथा संत दलीप सिंघ मेमोरियल खालसा कॉलेज, डुमेली (कपूरथला) आदि प्रसिद्ध शैक्षणिक संस्थाएं भी आपके प्रयत्न सदका ही शिरोमणि गु. प्र. कमेटी, श्री अमृतसर के प्रबंध तले आईं।

२००४ ई में स. काबल सिंघ फिर गढ़शंकर से शिरोमणि गु. प्र. कमेटी के सदस्य चुने गए। ९ जून, २०१० ई को आप परलोक सिधार गए।



ख़बरनामा

द्वि-वर्षीय सिक्ख धर्म अध्ययन पत्राचार कोर्स का परिणाम घोषित

श्री अमृतसर : १४ मई : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी की धर्म प्रचार कमेटी द्वारा चलाए जा रहे द्वि-वर्षीय सिक्ख धर्म अध्ययन पत्राचार कोर्स की जनवरी २०१४ में प्रथम व द्वितीय वर्ष की ली गई परीक्षा का परिणाम घोषित करते हुए सचिव स. सतबीर सिंघ, सचिव स. रूप सिंघ तथा सचिव स. मनजीत सिंघ ने परीक्षा में उत्तीर्ण होने वाले विद्यार्थियों को मुबारकबाद दी है।

परीक्षा के परिणाम संबंधी जानकारी देते हुए सचिव स. सतबीर सिंघ ने बताया कि प्रथम वर्ष की परीक्षा के २०० अंकों में से बलजिंदर सिंघ पुत्र स. सतपाल सिंघ, सिक्ख नेशनल कॉलेज, कादियां (गुरदासपुर) ने १८३ अंक लेकर प्रथम स्थान; रजिंदर कौर पुत्री स. हरभजन सिंघ, सिक्ख नेशनल कॉलेज, कादियां (गुरदासपुर) ने १८२ अंक लेकर द्वितीय स्थान तथा परमिंदर कौर पुत्री स. अमर सिंघ, खालसा कॉलेज, गढ़दीवाल (होशियारपुर) ने १७८ अंक लेकर तृतीय स्थान प्राप्त किया है। उन्होंने बताया कि दूसरे वर्ष की परीक्षा के ४०० अंकों में से गुरपिंदर कौर पुत्री स. रणजीत सिंघ, निवासी श्री गंगानगर ने ३४७ अंक लेकर प्रथम स्थान; मनिंदर कौर पुत्री स. बलजीत सिंघ, निवासी गांव छीना (ज़िला गुरदासपुर) ने ३४५ अंक लेकर द्वितीय स्थान तथा गुरप्रीत कौर पुत्री स. करनैल सिंघ, निवासी गांव बिजलीवाल (गुरदासपुर) ने ३४३ अंक लेकर तृतीय स्थान प्राप्त किया है।

स. सतबीर सिंघ ने बताया कि प्रथम वर्ष की परीक्षा में ७४१८ तथा द्वितीय वर्ष की परीक्षा में १२४५ विद्यार्थियों ने भाग लिया। उन्होंने बताया कि प्रथम वर्ष के ९५ तथा द्वितीय वर्ष के ४३ विद्यार्थियों ने मेरिट सूची में आकर वजीफा प्राप्त किया है। वजीफे संबंधी उन्होंने बताया कि प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान पर आने वाले विद्यार्थियों को क्रमशः ५१००, ४१०० तथा ३१०० रुपए दिए जाएंगे। इसके अलावा ८० प्रतिशत से अधिक अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को प्रति विद्यार्थी ११०० रुपए देकर सम्मानित किया जाएगा।

इस अवसर पर उप सचिव स. जसविंदर सिंघ तथा पत्राचार कोर्स विभाग के प्रभारी स. सुखदेव सिंघ भी उपस्थित थे।

शिरोमणि गु. प्र. कमेटी करेगी ऐतिहासिक किलों का जीर्णोद्धार

श्री अनंदपुर साहिब : २८ मई : श्री अनंदपुर साहिब के ऐतिहासिक किला अनंदगढ़ साहिब, किला तारागढ़ साहिब, किला लोहगढ़ साहिब, किला होलगढ़ साहिब तथा किला फ़तहिगढ़ साहिब के जीर्णोद्धार के लिए कार्यकारिणी की एकत्रता में निर्णय लेकर बनाई गई सब-कमेटी ने सभी किलों का सर्वेक्षण किया। इस सब-कमेटी में सिंघ साहिब ज्ञानी मल्ल सिंघ, स. सुखदेव सिंघ भौर, डॉ. गुरमोहन सिंघ, स. रूप सिंघ सचिव, स. दिलजीत सिंघ अपर सचिव, स. मनप्रीत सिंघ एक्सीयन तथा स. सुखविंदर सिंघ मैनेजर शामिल हैं।

इस अवसर पर स. सुखदेव सिंघ भौर ने बताया कि किला तारागढ़ साहिब के अंदर

डिस्पेंसरी एवं सेवा-सिमरन केंद्र बनाने के साथ-साथ प्राचीन बावलियों की सेवा-संभाल भी की जाएगी। उन्होंने बताया कि किला अनंदगढ़ साहिब में युद्ध संबंधी दृश्यों को दर्शाता पलाज़्मा तैयार किया जाएगा। किला लोहगढ़ साहिब में सिक्ख फौज के लिए शस्त्र तैयार किए जाते थे। इसमें भाई बचित्तर सिंघ की बहादुरी को दर्शाती यादगार बनाई जाएगी। स. भौर ने बताया कि किला होलगढ़ साहिब में गुरु साहिब के दरबारी कवि भाई नंद लाल जी की रचनाओं एवं अन्य विरासती निशानियों को स्थापित कर एक पुस्तकालय बनाया जाएगा। इसी प्रकार किला फ़तहिगढ़ साहिब में नौजवान पीढ़ी को गतके (मार्शल आर्ट) का प्रशिक्षण देने के लिए गतका अकादमी स्थापित की जाएगी। इसी के साथ प्राचीन वृक्षों एवं कुओं आदि को भी सुरक्षित किया जाएगा।

पाकिस्तान में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का अपमान होना निंदनीय

श्री अमृतसर : २८ मई : शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने पाकिस्तान में श्री गुरु ग्रंथ साहिब का अपमान किए जाने की घटनाओं की निंदा करते हुए इनकी पुनरावृत्ति पर सख़्त पाबंदी लगाने की मांग की है।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने बताया कि पाकिस्तान के राज्य सिंध के शक्कर, दादू एवं शिकारपुर ज़िलों में कुछ शरारती तत्वों द्वारा श्री गुरु ग्रंथ साहिब का अपमान किए जाने की घटनाएं दुर्भाग्यपूर्ण हैं और ऐसे में दो समुदायों में अशांति का माहौल पनपने की आशा बन जाती है। उन्होंने बताया कि श्री गुरु ग्रंथ साहिब में दर्ज बाणी समूह मानवता को भाईचारे के सूत्र में पिरोने का उपदेश देती है। ऐसी घटनाओं से घृणा का माहौल सृजित होने की संभावनाएं बन जाती हैं। उन्होंने बताया कि इन घटनाओं से समूह सिक्खों के हृदय को भारी ठेस पहुंची है। उन्होंने पाकिस्तान सरकार से अपील की है कि वो ऐसे शरारती तत्वों का पता लगाकर उन्हें तुरंत गिरफ्तार करे तथा अल्पसंख्यक सिक्ख भाईचारे के धार्मिक स्थानों की सुरक्षा को विश्वसनीय बनाए।

हरियाणा में अलग गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी हरगिज़ नहीं बनने दी जाएगी

श्री अमृतसर : १४ जून : तथाकथित हरियाणा गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी (एडहॉक) के स्वयं बने अध्यक्ष स. दीदार सिंघ नलवी द्वारा हरियाणा में अलग गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी बनाने के दिए बयान की शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने सख़्त शब्दों में निंदा करते हुए कहा है कि हरियाणा में अलग गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी हरगिज़ नहीं बनने दी जाएगी।

जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि स. नलवी सिक्ख पंथ की विरोधी शक्तियों की कठपुतली बनकर काम कर रहे हैं। दूसरी तरफ उन्होंने हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री भुपिंदर सिंह हुड्डा द्वारा हरियाणा में अलग गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी बनाए जाने की हिमायत करने के दिए बयान पर भी सख़्त एतराज़ प्रकट किया। उन्होंने कहा कि शिरोमिण गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी पंजाब के अलावा हरियाणा एवं हिमाचल प्रदेश के गुरुद्वारा साहिबान का प्रबंध बड़े अच्छे से चला रही है।



प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, श्री अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, श्री अमृतसर से प्रकाशित किया। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०७-२०१४